लघु मुर्गीपालन

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ करीब 80 प्रतिशत आबादी कृषि उत्पादन पर अपना जीवन निर्वाह करते है। हमारे देश की अर्थव्यवस्था में कृषि के साथ–साथ पशुपालन तथा मुर्गीपालन का बहुत महत्व है। आजकल बढती हुई जनसंख्या की समस्या के कारण हमारी भूमि पर अधिक दबाव पड़ रहा है, जिसके कारण यह संभव नहीं है कि अधिक भूमि पर अनाज आदि उगा सकें। एसी स्थिति में भोजन की समस्या को हल करने में मुर्गीपालन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। मुर्गीपालन का भारतीय कृषकों के लिये विशेष महत्व है क्योंकि इस व्यवसाय में कम खर्चे की आवश्यकता होती है तथा आमदनी भी अच्छी व जल्दी होती है। मुर्गी से प्राप्त खाद कृषि के लिये वरदान है। घर की महिलाएँ एवं बच्चे भी इस कार्य को कर सकते हैं और घर की आमदनी बढ़ा सकते है। मुर्गीपालन से हम बढ़ती हुई बेरोजगारी की समस्या को भी कुछ हद तक हल कर सकते है। मुर्गीपालन द्वारा आमदनी के अतिरिक्त मनुष्य के भोजन में अण्डे व माँस द्वारा पोष्टिक तत्वों की पूर्ती होने के कारण इस व्यवसाय की अत्यंत उपयोगिता है।

कुक्कुट पालन में विकसित आनुवंशिक तकनीकों के प्रयोग तथा आधुनिक प्रबन्ध उपायों को अपनाने से भारतीय कुक्कुट उद्योग में 8 से 10 प्रतिशत अण्डा उत्पादन तथा ब्रायलर उत्पादन में 15 से 20 प्रतिशत की दर से वृद्धि हो रही है। आज भारत में अण्डा उत्पादन 3700 करोड़ तथा ब्रायलर उत्पादन 90 करोड़ प्रतिवर्ष हो रहा है और विश्व में अण्डा उत्पादन में भारत चौथे तथा ब्रायलर उत्पादन में उन्नीसवें स्थान पर है।

ग्रामीण क्षैत्रों मे रहने वाले किसान संसाधनों की कमी, तकनिकी जानकारी के अभाव एवं अन्य कारणों से वयवसायिक स्तर पर कुक्कुट पालन नहीं कर पाते है। व्यवसायिक स्तर पर कुक्कुट पालन करने के लिये अधिक धन, समुचित तकनिकी ज्ञान तथा संसाधनों की आवश्यकता होती है जो कि गरीब किसानों के लिये नामुमकिन है।

लघु मुर्गीपालन

भारत की 70 प्रतिशत आबादी गाँवों में रहती है। तथापि 75 प्रतिशत से अधिक अण्डा तथा 90 प्रतिशत व्यवसायिक उत्पादित ब्रायलर की खपत शहरों एवं कस्बों में होती है। इस कारण ग्रामीण क्षैत्रों की माँग को घर के पिछवाडें मुर्गीपालन से पूरा किया जाता है। प्राचीन काल से ही ग्रामीण क्षैत्र में छोटे किसान, भूमिहीन, मजदूर, गरीब व पिछड़े वर्ग के लोगों द्वारा घर के आँगन में मुर्गीपालन किया जाता रहा है। आँगन में मुर्गीपालन समाज में कमजोर, निर्धन किसानों, भूमिहीन श्रमिकों तथा छोटे किसानों के लिये अतिरिक्त आय एवं पोष्टिक आहार का सबसे उत्तम एवं कम खर्च वाला साधन है।

लघु मुर्गीपालन की विशेषताएँ :-

- यह व्यवसाय घर के आँगन में 5–15 मुर्गियाँ पाल कर किया जाता है।
- इस विधि में किसान देशी मुर्गियाँ पालते है।
- घर के पिछवाडे मुर्गीपालन में मुर्गियाँ दिन में बाहर खेतों में घूमती रहती है तथा रात में उन्हें पेड़ों पर अथवा दड़बों में रखा जाता है।
- मुर्गियाँ दिन में खेतों में पड़े अनाज के दाने, बीज, खरपतवार आदि खाकर अपना पेट भरती है तथा किसान सीमित मात्रा में घर की झूटन, खराब अनाज आदि मुर्गियों को खिलाता है।
- मुर्गियों का अण्डा उत्पादन बहुत कम होता है। मुर्गियों का वार्षिक अण्डा उत्पादन 40–50 अण्डें होता है तथा अण्डें का रंग भूरा व वजन भी बहुत कम होता है।
- वयस्क मुर्गियों का वजन 1 किलो तथा मुर्गो का वजन 1.5 किलो होता है जो कि उन्नत नस्लों के मुकाबले में बहुत कम है।
- इस विधि में कुड़क मुर्गी द्वारा अण्डों से चूजे निकालते है। यह देखा गया है कि लोग वर्ष भर मुर्गियों से चूजे लेते रहते है। इस पद्धति से मुर्गी अत्यन्त ब्रूडी हो जाती है। आमतौर से मुर्गी 10–12 अण्डे देने के बाद कुड़क हो जाती है और अण्डे सेने हेतु तैयार हो जाती है। अण्डे से चूजे निकलने के बाद मुर्गी एक माह तक उसकी देखभाल करती है और उसके बाद फिर अण्डे देने लगती है। इस प्रकार यह चक्र एक वर्ष में 4–5 बार चलता है और कुल अण्डा उत्पादन 40–50 अण्डा होता है।

– वैज्ञानिक विधि नहीं अपनाने के कारण अण्डों से चूजे कम एवं कमजोर पैदा होते है।

– चूजों को पालते समय उनकी मृत्युदर बहुत अधिक होती है।

– संक्रामक रोगों के प्रकोप के कारण मुर्गियों में भी मृत्युदर ज्यादा होती है।

– उचित आवास के अभाव में कुत्तों, बिल्लियों व अन्य जंगली पशुओं द्वारा चूजों व मुर्गियों को खाने से किसानों को काफी नुकसान उठाना पड़ता है।

– कुक्कुट पालन के लिये आवश्यक संसाधनों एवं जानकारी का अभाव होता है।

– लघु मुर्गीपालन बिना किसी खर्च अथवा बहुत कम खर्च करके किया जाता है।

वैज्ञानिक विधि द्वारा लघु मुर्गीपालन

लघु मुर्गीपालन द्वारा अधिक आय के लिये इसे वैज्ञानिक विधि द्वारा करना आवश्यक है। चाहे अण्डे वाली मुर्गियों का काम हो अथवा माँस वाली ब्रायलर का, छोटे पैमाने पर यह काम किया जाये या बड़े स्तर पर मुर्गीपालन का काम शुरू करने के लिये निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिये।

1. उन्नत नस्ल
2. आवास व्यवस्था
3. संतुलित आहार
4. अच्छा रखरखाव
5. रोग नियंत्रण

1. उन्नत नस्ल :

मुर्गी पालन में चूजों का वही स्थान है जो खेती में बीज का होता है। देशी मुर्गियों की उत्पादन क्षमता बहुत कम होने के कारण उन्नत नस्ल की मुर्गियाँ पालना लाभदायक होता है। मुर्गियों की बहुत सी नस्लें हैं जिन्हें उनके उपयोग एवं उद्देश्य के अनुसार तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

1.1 अण्डा उत्पादन हेतु : व्हाइट लेग हॉर्न इस वर्ग की सफलतम शुद्ध नस्ल है।

1.2 मांस उत्पादन हेतु : व्हाइट कर्निश तथा प्लाइमाउथ रॉक इस वर्ग की सबसे लोकप्रिय नस्लें है।

1.3 द्वि–प्रयोजनीय नस्लें : रोड़ आइलैण्ड रेड इस वर्ग की सर्वाधिक प्रचलित शुद्ध नस्ल है।

मुर्गी की जातियां

देशी नस्लें

1. असील मुर्गी

प्राप्ति स्थान– सम्पूर्ण भारत में । विशेषकर हैदराबाद के आसपास के क्षेत्र, उतरप्रदेश में लखनऊ और रामपुर में ।

शारीरिक लक्षण

– लड़ाई के गुणों से परिपूर्ण ।
– शरीर सुसंगठित, सीना चौड़ा, सिर छोटा व चौड़ा।
– पूंछ छोटी, टांगें मजबूत एवं गर्दन मध्यम लम्बाई की ।
– कलंगी छोटी मटर जैसी ।
– पक्षी बड़े और भव्य दिखायी देते है।
– चोच मटर जैसी ।
– चेहरा कुछ लम्बा एवं दाड़ी नाम को अथवा बहुत छोटी होती है।
– टांगे मजबूत, सीधी और पतली ।

2. चटगांव या मलाया

प्राप्ति स्था – मूल स्थान मलाया/चटगांव के प्रजनन फार्म पर इसे पाला गया है।

शारीरिक लक्षण –

– काफी बड़ी नस्ल के झागडालू स्वभाव के होते है।
– कलंगी छोटी एवं छोट अंगूर के गुच्छे के समान ।

– सिर लम्बा, चोंच लम्बी एवं पतली ।

– दाढ़ी छोटी व लाल ।

– कर्ण पल्लव लाल, आंखे पीली, कभी–कभी सफेद भौएं बड़ी एवं लटकी हुई।

– छाती चौड़ी एवं भरावदार ।

– टांगे लम्बी, पतली बिना पर वाली ।

– अधिकतर भूरे, सफेद, काली और गहरी भूरी रंगों में ।

3. घाघस मुर्गी

प्राप्ति स्थान – यह एक भारती नस्ल है। दक्षिणी भारत में काफी अधिकता में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण

– टांगे लम्बी, सीधी एवं मजबूत, इनका रंग पीला अथवा पीला–गहरा होता है।

– पर लाल, भूरे काले एवं भूरे रंग के ।

– आकार में बड़ी और कठोर ।

– इसका मां के रूप में (अण्डों पर बैठना) अच्छा कार्य है।

विदेशी नस्लें

1. प्लेमॉउथ रॉक

प्राप्ति स्थान – अमेरिका की एक विशेष लोकप्रिय प्रजाति ।

शारीरिक लक्षण

– शरीर काफी बड़े आकार का ।

– शरीर लम्बा, छाती काफी भरावदार तथा पीठ बैठी हुई ।

– कलंगी इकहरी, पर भूरी तथा काली धारीदार युक्त ।

– चमड़ी तथा टांगे पीली ।

– औसत शरीर भार नर 4.5 कि.ग्रा., मादा 3.75 कि.ग्रा. होता है।

2. न्यू हैम्पशायर मुर्गी

1. प्राप्ति स्थान – नई नस्ल है। इसे अमरीका में रोड आयलैण्ड रैड की मुर्गियों से पैदा किया गया है।

शारीरिक लक्षण

– रंग बादामी लाल एवं मजबूत पक्षी । कलंगी इकहरी ।

– मुर्गीयों अण्डे अधिक देती है, जिनका रंग भूरा होता हैं

– नर का औसत भार 4.25 कि.ग्रा. एवं मादा 3 कि.ग्रा. की ।

3. रोड आयलैण्ड रैड

प्राप्ति स्थान – इस जाति के पक्षी भारत में सर्वाधिक प्रचलित है। परन्तु मुल स्थान अमेरिका है।

शारीरिक लक्षण –

– शरीर आयताकार एवं देखने में भारी तथा भारत में अधिक प्रचलित जाति है।

– पीठ समतल एवं सीना आगे से उभरा हुआ ।

टांगे व त्वचा पीली ।

– पक्षियों का रंग गहरा या भूरा लाल होता हैं

– आजकल सामान्यतः चॉकलेट तथा गहरे रंग के पक्षी भी मिलते है। इनमें अण्डा उत्पादन की क्षमता अधिक होती है। मांस के लिये भी उपयुक्त ।

– नर 3.25 कि.ग्रा. तथा मादा 2.25 कि.ग्रा. औसतन भार के ।

– इस जाति में एकल कलंगी तथा गुलाबी कलंगी की दो किस्में पायी जाती है।

4. व्हाइट लैगहॉर्न

प्राप्ति स्थल – मुख्य रूप से इटली में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण –

– संसार की सबसे अधिक अण्डा देने वाली मुर्गी परन्तु मांस के लिए उपयुक्त नहीं

– पक्षी छोटे आकार के चंचल स्वभाव वाले होते हैं एवं देखने में सुन्दर भी ।

– शरीर ठोस, पूंछ सदैव नीची, पीठ लम्बी तथा छाती चौड़ी ।

– टांगे अपेक्षाकृत लम्बी ।

– चोंच, खाल, टांगे एवं अंगूठे सभी पीले रंग के ।

– अण्डे सफेद रंग के, आकार में बड़े एवं संख्या में अधिक होते है।

– इकहरी एवं गुलाबी किस्म की कलंगी ।

– कुछ मुर्गियों का रंग सफेद, भूरा, काला, कत्थई होता है। कुछ का हल्का सफेद, लाल व पूंछ काली होती है।

– वर्ष भर में 180–220 तक अण्डे मिलते है।

– सीने पर मांस कम । इसलिये मांस के लिये अधिक उपयुक्त नहीं ।

– नर का वजन 1.50 से 2.0 किलोग्राम और मादा का 1.25 से 1.50 किलोग्राम होता है।

5. मिनोरका

शारीरिक लक्षण –

– काफी बड़ी नस्ल एवं लम्बे शरीर के कारण शेष नस्लों से भिन्न होती है।

– कलंगी काफी बड़ी एवं लम्बी दाढ़ी तथा लाल रंग की होती है।

– कंधों से पूंछ तक एक विशेष प्रकार का ढलावा ।

– कमर काफी लम्बी होती हैं

–अण्डे बड़े और सफेद रंग के होते है।

– इसकी काली, सफेद और कत्थई तीन किस्में होती है।

– इकहरी कलंगी तथा काले रंग वाली अत्यधिक प्रचलित है।

मुर्गीपालन के उपकरण

कैण्डलर

पानी का बर्तन

दाने का बर्तन

अण्डा रखने की ट्रे

मुर्गियों की उपरोक्त शुद्ध नस्लों की तुलना में आजकल इनकी संकर नस्लें अधिक लोकप्रिय हो गई है। अण्डा उत्पादन हेतु संकर नस्लें कद में शुद्ध नस्लों की अपेक्षा छोटी होती है व उनकी अण्डा उत्पादन क्षमता अधिक होती है। मांस उत्पादन हेतु संकर नस्लों की बढ़वार अच्छी होती है व छ सप्ताह में बाजार में बेचने योग्य हो जाती है। रानीशेवर, हाईलाइन, आर्बर एकर्स, बेबकॉक, एच.एच. 260, बी बी 300 आदि कुछ प्रमुख संकर नस्लें हैं। उचित नस्ल का चुनाव करते समय उसकी अण्डा उत्पादन क्षमता, शारीरिक वृद्धिदर, वयस्क वजन, मृत्युदर आदि का ध्यान रखना चाहिये।

ग्रामीण क्षैत्र में आँगन में मुर्गीपालन के लिये उपयुक्त अधिक उत्पादन वाली कई नस्लों को विकसित किया गया है। इन सभी नस्लों को देशी मुर्गी को आधार मानकर तैयार किया गया है। इनमें निर्भीक, श्यामा, उपकारी, हितकारी, वनराजा, ग्रामप्रिया, गिरीराजा आदि प्रमुख है। ये देश की विभिन्न जलवायु वाले क्षैत्रों के लिये गाँवों में आँगन में मुर्गीपालन के लिये उपयुक्त है। इनकी उत्पादन क्षमता देशी मुर्गियों के मुकाबले 3 से 4 गुना अधिक होती है। अण्डों का आकार बड़ा व वजन भी अधिक होता है। ये देशी मुर्गियों के समान दिखती है। वयस्क मुर्गियों का वजन ज्यादा होता है। मृत्यु दर भी कम है तथा खराब आहार व प्रबन्ध स्थितियों के बावजूद भी इनमें रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक होती हैं।

2. आवास व्यवस्था

ज्यादातर किसान आँगन में मुर्गीपालन करते हुए मुर्गियों के लिये उचित आवास व्यवस्था का प्रबन्ध नहीं करते है। दिन में मुर्गियों को खेतों में छोड़ दिया जाता है तथा रात्री में सुरक्षा के लिये उन्हें पेड़ों पर चढ़ा दिया जाता है या छोटे से दड़बों में बंद कर दिया जाता है। उचित आवास व्यवस्था नहीं होने से मुर्गियों के उत्पादन क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है तथा साथ ही उनमें मृत्यु दर भी ज्यादा होती है। मुर्गियों का दड़बा बनाते समय यहा ध्यान में रखें कि आमतौर पर एक वयस्क मुर्गी को 2 से 2.5 वर्ग फिट की जगह की आवश्यकता होती है। दडबा जमीन से थोड़ा उपर ढलान वाली जगह बनाना चाहिये ताकि बरसात में अंदर पानी न भर सके। दडबा साफ सुथरा हवादार एवं नमी रहित (सूखा) होना चाहिये। मुर्गीघर की लम्बाई पूर्व–पश्चिम में होनी चाहिये ताकि मुर्गियों को धूप व प्रकाश मिल सके। दडबे में प्रकाश की व्यवस्था उचित होनी चाहिये। दडबे की सफाई रोज करनी चाहिये तथा समय–समय पर कीटाणुनाशक दवा का छिडकाव करना चाहिये। 20 मुर्गियों के लिये 8 फिट लम्बा, 5 फिट चौड़ा व 5 फिट ऊँचा दड़बा बनाना चाहिये। इस दड़बे में एक दरवाजा तथा दो जाली की खिड़कियाँ होनी चाहिये ताकि स्वच्छ हवा अन्दर आ सके। दड़बे में फर्श कच्चा अथवा पक्का रख सकते हैं परन्तु फर्श पर चावल की भूसी/गेहूँ का भूसा/सूखी घास आदि की 3–5 सेमी बिछावन बिछानी चाहिये। समय–समय पर इसे पलटते रहना चाहिये।

संतुलित आहार

मुर्गीपालन से अधिक उत्पादन के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि मुर्गियों को संतुलित आहार दिया जाये। मुर्गियों को उनकी आयु, विकास के स्तर तथा उत्पादन के हिसाब से दाना दिया जाना चाहिये। जिससे मुर्गियों का पूर्ण विकास, तथा अधिकतम उत्पादन लिया जा सके। मुर्गीपालन पर किये गये कुल खर्च का लगभग 70 प्रतिशत उसके आहार पर ही खर्च हो जाता है। इसलिये मुर्गियों के लिये संतुलित आहार का महत्व और भी बढ़ जाता है।

संतुलित आहार वह आहार है जिसमें सभी पोषक तत्व उचित मात्रा में उपलब्ध हों जो कि शरीर के सर्वागींण विकास तथा उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिये आवश्यक होते है और शरीर को स्वस्थ एवं रोग मुक्त रखने में भी सहायक होते है।

पिंजरा पद्धति

खुला आवास प्रणाली

आम तौर पर मुर्गियों का दाना बनाने के बारे में मुर्गीपालक किसी बात का विचार नहीं करते है, बस थोडी सी मक्का, खली, चोकर या अन्य उपलब्ध अनाजों को मिला कर मुर्गी आहार तैयार कर लेते है। इस प्रकार से तैयार आहार से अच्छा उत्पादन नहीं हो पाता है और मुनाफा भी नहीं मिलता।

मुर्गियों की विभिन्न श्रेणी एवं आयु की अवस्था में उसकी शारीरिक क्रियाओं की भिन्नतानुसार पौष्टिक तत्वों की आवश्यकताएं भी भिन्न–भिन्न होती है। इस कारण मुर्गियों को विभिन्न अवस्थाओं में निम्न प्रकार के आहार देना जरूरी है :–

3.1 अण्डे देने वाली मुर्गियों का दाना

– 0 से 8 सप्ताह तक चिक फीड़

– 8 से 20 सप्ताह तक ग्रोवर फीड़

– 20 सप्ताह से ऊपर लेयर फीड

3.2 मांस वाली मुर्गियों (ब्रायलर) का दाना

– 0 से 6 सप्ताह तक ब्रायलर स्टार्टर फीड

– 6 से 8 सप्ताह या बिक्री की आयु तक ब्रायलर फिनिशर फीड

जहां सुविधा हो मुर्गीपालक स्वयं अपना संतुलित आहार बना सकते है। वयस्क मुर्गियों के लिये सन्तुलित आहार के कतिपय मिश्रण इस प्रकार है।

3.3 मुर्गियों के संतुलित आहार हेतु कतिपय मिश्रण (किलो ति 100 किलोग्राम)

आहार संघटक	चिक फीड	ग्रोवर फीड	लेयर फीड
पीली मक्का	40	37	47
चावल कनकी	18	20	14
चावल पॉलिश	9	15	10
मूंगफली खल	22	20	20
मछली चूर्ण	8	5	6
खनिज लवण मिश्रण	3	3	3

ग्रामीण क्षैत्रों में आँगन में मुर्गीपालन करने वाले मुर्गीपालक अपनी मुर्गियों को दिन में खेतों में खुले छोड़ देते है जहाँ से वह खेतों में पड़े अनाज, बीज, कीडे मकोडे, खरपतवार आदि खकर अधिकतर अपना पेट भरती है। कभी–कभी मुर्गीपालक मक्का या अन्य उपलब्ध अनाज, रसोई की झूटन आदि सीमित मात्रा में मुर्गियों को खिलाते है। यह भी देखा गया है कि आहार बर्तन में न देकर जमीन पर बिखेर कर खिलाते है, जिससे ज्यादातर आहार खराब हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों में मुर्गियों एवं चूजों का शारीरिक विकास नहीं हो पाता, मुर्गियाँ कमजोर एवं रोगग्रस्त हो जाती है। उनमें मृत्युदर भी बढ़ जाती है। अण्डा उत्पादन कम होता है एवं मुर्गीपालक को पूरा मुनाफा नहीं हो पाता। अतः आँगन में मुर्गीपालन से अधिक आय प्राप्त करने के लिये मुर्गीपालकों को संतुलित आहार के महत्व को समझना पडेगा। संतुलित आहार को मक्का, चावल, बाजरा आदि अनाज का दलिया, चोकर, चावल की पलिश, खल, खनिज लवण मिश्रण आदि को उचित अनुपात में मिला कर घर पर ही तैयार किया जा सकता है। बाजार में विभिन्न आयु के पक्षियों के लिये तैयार दाना उपलब्ध है। चूजों को 8 सप्ताह की उम्र तक भरपेट संतुलित आहार देना चाहिये ताकि उनकी बढवार अच्छी हो। 8 सप्ताह बाद दिन में उन्हें बाहर खुला छोड़ देना चाहिये। दिन भर वे घर के आँगन तथा खेतों में अन्न के दान, बीज, कीडे–मकोडे, घास की कोमल पत्तियाँ एवं घर की झूटन खकर अपना पेट भर सकती है। भोजन की उपलब्धता, मौसम एवं खेतों पर खड़ी फसल के अनुसार 8 सप्ताह बाद पक्षियों को कम से कम 35 से 40 ग्राम दाना प्रति पक्षी के हिसाब से प्रतिदिन देना चाहिये। दाना हमेशा किसी बर्तन में ही देंवें। फर्श पर दाना खिलाने से दाना खराब व व्यर्थ में बरबाद हो जाता है।

4. अच्छा रखरखाव

एक आदर्श कुक्कुट फार्म के लिये उचित रख रखाव या प्रबन्ध व्यवस्था होना आवश्यक है जिसमें अण्डें सेने, चूजे पैदा होने के समय से लेकर अण्डा उत्पादन चक्र की समाप्ति पर मुर्गियों की बिक्री होने तक का पूरा प्रबन्ध कौशल आता है। मुर्गीपालन व्यवसाय से अधिक लाभ कमाने के लिये प्रबन्ध व्यवस्था की और ध्यान देना बहुत जरूरी है। यदि आप अच्छी किस्म की मुर्गियाँ पालते है, संतुलित आहार देते है तथा रोग नियंत्रण का पूरा ध्यान रखते है किंतु रख रखाव पर ध्यान नहीं देते है तो आपका सारा परिश्रम निष्फल हो जाने की पूरी आशंका है। मुर्गियों की प्रबन्ध व्यवस्था अथवा रख रखाव को उनकी उम्र के हिसाब से निम्नानुसार स्थितियों में बाँटा जा सकता है।

4.1 अण्डा देना

अण्ड़ों से चूजे निकालने के लिये सामान्यतया दो विधियों का प्रयोग किया जाता है।

4.1.1 प्राकृतिक विधी : प्राकृतिक विधि में अण्डें सेने की पूरी प्रक्रिया कुडक मुर्गी द्वारा की जाती है। यह विधि छोटे मुर्गीपालकों के लिये उपयुक्त है। इस विधि से अण्डों से चूजे प्राप्त करने के लिये उचित कुडक मुर्गी का चयन आवश्यक है। इस कार्य हेतु देशी मुर्गी उपयुक्त रहती है। कुडक मुर्गी अण्डे नहीं देती है और अन्य अण्डे देने वाली मुर्गियों से अलग रहती है। इस विधि से चूजे प्राप्त करने के लिये निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये।

- अण्डे सेने हेतु प्रयोग की जाने वाली मुर्गी स्वस्थ, अच्छे आकार वाली एवं अण्डों के उपर बैठने की अच्छी क्षमता वाली होनी चाहिये।
- अण्डे सेने वाली मुर्गियों को अण्डे सेने के उपयोग में लाने से पूर्व आन्तरिक एवं बाह्य परजीवियों के विरूद्ध उपचारित कर लेने चाहिये।
- मुर्गी के शरीर के आकार के अनुसार एक मुर्गी के नीचे 10–15 अण्डें रख सकते है।
- अण्डे मध्यम आकार के, अण्डाकार एवं उसका बाहरी खोल मोटा व मजबूत होना चाहिये।
- अण्डों पर मुर्गी बैठाने की जगह साफ सुथरी एवं एक अंधेरे कोने में होनी चाहिये जहाँ मुर्गी को कोई परेशान न कर सके। अण्डें सेने की जगह 2 फीट 2 फीट की होनी चाहिये जिसे बांस की टोकरी, गत्ते का बक्सा या बडे घड़े को आधा काट कर बनाया जा सकता है। इसके अंदर नीचे थोडी मिट्टी डाल कर उपर सूखी मुलायम घास या पुवाल की बिछावन बिछा देनी चाहिये।
- मुर्गी के अण्डों से 21 दिन की अवधी में चूजा उत्पन्न होता है। 21 दिनों तक कुडक मुर्गी अण्डों पर बैठ कर उन्हें सेती है। दिन में दो बार आहार एवं पानी के लिये अण्डों से उठती है। इस दौरान समय–समय पर अण्डों को हिलाते रहना चाहिये ताकि बढ़ता हुआ भ्रूण अण्डों के खोल से चिपक न जावे।

चूजे निकालने की मशीन (इन्क्यूबेटर)

4.1.2 कृत्रिम विधि :– कृत्रिम विधि से अण्डे सेने का कार्य इन्क्यूबेटर/हेचिंग मशीन द्वारा किया जाता है। स्वस्थ भ्रूण के विकास एवं चूजों के सफल उत्पादन हेतु आधुनिक हैचरी एक यांत्रिक समाधान है। आधुनिक हेचिंग मशीनों में तापक्रम, आद्रता नियंत्रण व अण्डों को घुमाने आदि की उचित व्यवस्था होती है। इस विधि के बहुत से फायदे है। एक ही समय में ज्यादा अण्डों को एक साथ सेकर ज्यादा चूजें प्राप्त किये जा सकते है। इस विधि में हर मौसम में अण्डों से चूजे प्राप्त कर सकते है। आधुनिक मशीनों द्वारा प्रति सप्ताह लगभग 10 लाख तक स्वस्थ चूजे पैदा किया जा सकता है। प्राकृतिक विधि के मुकाबले इस विधि में अण्ड़ों से ज्यादा एवं स्वस्थ चूजे प्राप्त होते है। बड़े व्यवसाय के लिये यह उत्तम विधि है।

4.2 अण्डों का चुनाव

चूजे निकालने के लिये प्रयोग में लिये जाने वाले अण्डों की अच्छी तरह जाँच करके चयन करना चाहिये। अण्ड़ों से ज्यादा एवं स्वस्थ चूजे प्राप्त करने के लिये निम्न बिन्दूओं का ध्यान रखना चाहिये।

4.2.1 अण्डों की साइज – अण्डें मध्यम साईज के होने चाहिये। अधिक छोटे एवं बहुत बड़े साइज के अण्ड़ों का चयन नहीं करना चाहिये क्योंकि उनमें से अच्छे व स्वस्थ चूजे निकालने की संभावना कम होती है।

4.2.2 अण्डों का आकार – अण्डों का आकार अण्डाकार होना चाहिये। गोल, लम्बे या असामान्य आकार के अण्डों का चयन नहीं करना चाहिये।

4.2.3 अण्डों के खोल की गुणवत्ता – अण्डों के बाह्य खोल मोटा एवं अच्छी गुणवत्ता वाला होना चाहिये। अण्डों का खोल कमजोर, टूटा हुआ अथवा दरार युक्त नहीं होना चाहिये। ऐसे अण्डों से चूजे निकालने की संभावना कम होती है। अण्डों के खोल पर किसी प्रकार का धब्बा नहीं होना चाहिये। खोल का बाहरी सतह खुरदारा न होकर समतल व चिकना होना चाहिये।

4.2.4 अण्डों की आंतरिक गुणवत्ता – सेने के लिये अण्डों के चयन पूर्व अण्डों के आंतरिक गुणवत्ता का परीक्षण करना चाहिये। गाँवों में जहाँ बिजली उपलब्ध है वहां केण्डलिंग लेम्प द्वारा अण्डों को रोशनी के सामने रख कर अण्डों की आंतरिक गुणवत्ता का परीक्षण किया जा सकता है। अण्डें की जर्दी मध्य भाग में होनी चाहिये। दो जर्दी वाले अण्डें, माँस या खून के धब्बे वाले अण्डें या बड़े वायु कोष वाले अण्डों का चुनाव नहीं करना चाहिये।

4.2.5 अण्ड़ों की आयु – गर्मी में चूजे निकालने हेतु प्रयोग में लाये जाने वाले अण्डे 3–4 दिनों से पुराने नहीं होने चाहिये। सर्दियों में 7 दिन पुराने अण्डों को सेने के लिये मुर्गियों के नीचे रख सकते है। जैसे–जैसे अण्डा पुराना होता चला जाता है, उसमें से चूजे निकलने की संभावना भी कम होती चली जाती है। अण्डें ताजा है या पुराने इसकी जाँच करने के लिये एक बाल्टी में पानी भर कर उसमें अण्डों को डालना चाहिये। नीचे बैठ गये अण्डें ताजे एवं पानी के उपर तैरने वाले अण्डें पुराने होते है।

4.2.6 साफ अण्डें – सेने के लिये अण्डे साफ होना चाहिये। गन्दे अण्डों का प्रयोग सेने के लिये नहीं करना चाहिये। गन्दगी यदी कम है तो उसे कपडे से साफ करने के बाद ही प्रयोग में लाना चाहिये। अण्डें की गंदगी साफ करने के लिये कभी भी उसे पानी से रगड कर साफ नहीं करें। क्योंकि ऐसा करने पर खोल के छिद्र खुल जाते है एवं चूजा उत्पादन दर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

4.2.7 उत्तम नस्ल के अण्डें – अच्छी नस्ल के चूजे प्राप्त करने के लिये अच्छी नस्ल की मुर्गियों से प्राप्त अण्डों का उपयोग चुजे निकालने हेतु किया जाना चाहिये ताकि कुक्कुटशाला पर मुर्गियों की नस्ल में सुधार किया जा सके एवं अधिक उत्पादन प्राप्त कर सके।

4.2.8 मुर्गियों की आयु – मुर्गियां सामान्यतया 5 माह की आयु में अण्डा उत्पादन शुरू कर देती है। परन्तु जिन मुर्गियों से सेने के लिये अण्डें प्राप्त करना है उनकी आयु 8 माह से कम एवं 18 माह से ज्यादा नहीं होनी चाहिये। साथ ही इस बात का भी ध्यान रखें कि प्रति 6 से 8 मुर्गी समूह में एक नर जरूर हो ताकी हमें जीवयुक्त अण्डें प्राप्त हो सके। अण्डों में भ्रूण का विकास अच्छा हो, अण्डों से ज्यादा एवं स्वस्थ उत्पन्न हो इसके लिये आवश्यक है कि प्रजनन के काम आने वाले मुर्गे व मुर्गियाँ स्वस्थ हो और उन्हें संतुलित आहर मिल रहा हो।

4.2.9 सेने से पूर्व अण्डों का भण्डारण – प्रति दिन प्राप्त अण्डों को सेने के लिये उपयोग करने तक ठण्डे एवं नमी वाले स्थान पर सुरक्षित भण्डारण करना चाहिये। सेने के लिये चुने गये अण्डें का भण्डारण 16–17 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान एवं 60 प्रतिशत आद्रता वाली जगह पर 3–7 दिनों तक चूजा दर प्रभावित किये बिना किया जा सकता है। चुने गये अण्डों पर अति शीघ्र मुर्गी बैठा देनी चाहिये ताकि अधिक से अधिक चूजे प्राप्त कर सकें एवं साथ ही भण्डारण की समस्या भी कम हो सके।

4.3 चूजों का प्रबन्ध :–

मुर्गीपालन में छोटे चूजों का पालन–पोषण सबसे नाजुक कार्य है। चूजे बहुत नाजुक होते है और उनको पालने में सबसे ज्यादा ऐहतियात बरतने व ध्यान देने की जरूरत होती है। इस दौरान बीमारी व मृत्यु का सबसे ज्यादा खतरा होता है। यदि छोटे बच्चों को अच्छी तरह से नही पाला गया तो आगे चल कर अच्छे परिणाम नहीं मिल सकते। यदि कोई मुर्गीपालक अपने चूजों को अच्छी तरह कामयाबी के साथ पाल लेता है तो उसे एक सफल व काबिल मुर्गीपालक समझना चाहिये। चूजों के सही पालन–पोशण के लिये हमें निम्नलिखित बातों का ज्ञान होना चाहिये।

4.3.1 चूजे पालने का उचित समय : चूजे ऐसे समय खरीदें या घर पर ही अण्डों से निकाले कि उनका अण्डा उत्पादन उस समय शुरू हो जब अण्डों की अधिकतम कीमत प्राप्त हो। इस दृष्टि से जनवरी–मार्च का समय चूजा पालन हेतु लाभकारी रहता है। जहां तक संभव हो एक दिन की आयु के ही चूजे खरीदें एवं सदैव स्वस्थ चूजे ही प्राप्त करें।

4.3.2 चूजे पालने की विधि : अण्डों से चूजे निकलने के पश्चात चूजों को मौसम के अनुसार 8 सप्ताह तक एक निश्चित तामपान देने की आवश्यकता होती है। इस क्रिया को ब्रूडिंग भी कहा जाता है। चूजा पालन की दो विधियों प्रचलन में है।

अण्डों से चूजे निकलने के पश्चात् चूजों को मोसम के अनुसार 8 सप्ताह तक एक निश्चित तापमान देने की आवश्यकता होती है। इस क्रिया को ब्रूडिंग भी कहा जाता है। चूजा पालन की दो विधियाँ प्रचलन में है।

चुजो की ब्रूडिंग

4.3.2.1 प्राकृतिक विधि – ग्रामीण क्षेत्रों में जहां प्राकृतिक विधि द्वारा कुडक मुर्गी की सहायता से अण्डों से चूजा निकालने का कार्य किया जाता है, चूजा पालन के लिये भी प्राकृतिक विधि द्वारा मुर्गी की सहायता से किया जाता है। मुर्गी अपने शरीर का तापमान चूजों को देकर उन्हें पालती है। अपने आकार के अनुसार एक मुर्गी 10–15 चूजे पाल सकती है। इस कार्य के लिये देशी मुर्गी ज्यादा उपयुक्त होती है क्योंकि उनमें मातृत्व की सहज प्रवृति प्रबल होती है और अपेक्षाकृत कम शरीर भार होने से चूजों पर उनका पांव पड जाने पर भी चूजों को चोट नहीं पहुचती है। इस कार्य के लिये एक अलग पालन दडबों का प्रयोग करना चाहिये। यह दड़बा 2 फीट 2 फीट का, एक तरफ थोड़ा ढलान वाला होना चाहिये जिसे बांस की टोकरी, गत्ते का बक्सा आदि से बनाया जा सकता है। यहां मुर्गी चूजों के पास बैठ कर अपने शरीर की गर्मी चूजों को दे सकती है।

इस विधि से चूजा पालन करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये–

- मुर्गी और चूजों को अन्य मुर्गियों से थोड़ा अलग सूखा, हवादार व सुरक्षित दडबा/जगह देना चाहिये ताकि वह अपनी और चूजों की रक्षा कर सके एवं उन्हें भली–भांति पाल सके।
- मुर्गी और चूजों को संतुलित आहार/अनाज का मिश्रण दिन में कम से कम दो बार अवश्य देवें।
- साफ पानी सदा उपलब्ध रहना चाहिये तथा पानी का बर्तन गहरा नहीं होना चाहिये अन्यथा चूजे उसमें डूब कर मर सकते है।
- दिन में मुर्गी व चूजों को बाहर खुला छोड़ दे लेकिन रात्री में उन्हें दड़बों में बंद करें, जिससे जंगली जानवर, कुत्ते, बिल्ली, चूहों व सांप से तथा गर्मी, सर्दी व बरसात से उनका बचाव हो सके।
- चूजों के स्वास्थ्य के बारे में सदैव सजग रहना चाहिये एवं समय–समय पर लगने वाले टीके लगवाना चाहिये।

– चूजों व बड़ी मुर्गियों में कई बार एक दूसरे को चौंच मार कर घायल कर देने की बुरी आदत पड़ जाती है, जिसे केनिबोलिज्म कहते है। इस प्रवृति के कई कारण होते है जैसे कि कम जगह में अधिक चूजे रखना, ज्यादा तापमान, खाने–पीने के बर्तन में दाने–पानी का न होना, असंतुलित आहार, अधिक रोशनी तथा अपर्याप्त प्रबन्ध व्यवस्था। इस बुरी आदत से बचाने के लिये 4 से 6 सप्ताह की आयु पर चूजों की चौंच के उपर वाले हिस्से का एक तिहाई भाग काट दिया जाता है। कटने के बाद चौच आयु के साथ बढ़ती है, परन्तु उसका अगला भाग तीक्ष्ण नहीं रह कर भोंटा ही रहता है। इससे चूजों को आहार खाने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं आती परन्तु वह दूसरे चूजों को घायल नहीं कर पाता है। यह ध्यान रखें की केवल मादा चूजों की ही चेंच काटें नर चूजों की नहीं अन्यथा वह बड़ा होकर मादा पर प्रजनन हेतु नहीं चढ़ सकेगा। चोंच काटने के लिये विद्युत डीबीकर का प्रयोग किया जाता है।

4.3.2.2 कृत्रिम विधि – आधुनिक कुक्कुट पालन में जहां ज्यादा चूजों का पालन एक साथ किया जाता है वहां कृत्रिम विधि द्वारा ब्रूडर की सहायता से चूजों का लालन–पोषण बिना मुर्गी की सहायता से किया जाता है। इस विधि द्वारा किसी भी मौसम में अधिक चूजों का पालन एक साथ किया जा सकता है। इस विधि में चूजों के लिये आवश्यक तापमान को बिजली, कोयले, लकड़ी, मिट्टी के तेल या गैस से चलने वाले ब्रूडर से दिया जाता है। बाजार में कई तरह के एवं विभिन्न नाप के ब्रूडर उपलब्ध हैं।

4.4 पठोरों का प्रबंध –

पठोर अवस्था 6 अथवा 8 सप्ताह की आयु से प्रारम्भ होकर अण्डे देने की आयु अर्थात 4) से 5 माह की आयु पर समाप्त होती है। बढ़वार की स्थिति के दौरान उचित बढ़वार से मुर्गियों द्वारा अण्डे देने की वंशानुक्रम संभावना से अधिकतम लाभ मिलता है। उचित देखभाल के अभाव में चूजों की बढ़वार कम होती है तथा आगे चल कर उत्पादन क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इस अवस्था में कुडक मुर्गी या ब्रूडर की आवश्यकता नहीं होती। पठोरों का प्रबन्ध भी चूजों के प्रबन्ध के जैसे ही रहता है लेकिन उनके बढ़ते हुए शरीर भार तथा उनकी दैनिक आवश्यकताओं को देखते हुए निम्न अतिरिक्त बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

पठोरो का प्रबन्धन

- पठोरों के कम प्रोटीन व खनिज लवण की उचित मात्रा के साथ उचित ऊर्जा स्तर का विशेष आहार दिया जाता है।
- पठोरों के बढ़वार को देखते हुए उनकी जरूरत के हिसाब से संतुलित आहार उचित मात्रा में दें।
- दाना–पानी के बर्तनों की संख्या बढ़ावें।
- दडबों में उनके बढ़ते हुए शरीर के मुताबिक उचित जगह दें। कम जगह पर ज्यादा पठोर न पालें।
- जहां तक संभव हो चूजों, पठोरों तथा अन्य मुर्गे–मुर्गियों को अलग–अलग दडबों में रखें।
- बढ़वार के अंतिम अवस्था के दौरान बिमारियों से मुक्त रखने हेतु कम से कम 15 दिनों में एक बार कृमिनाशक दवा पिलाना चाहिये। कृमिनाशक दवा सायंकाल पिलानी चाहिये।
- यदि चूजों की चोंच 6 से 8 सप्ताह की उम्र में नहीं काटी गई है या और जरूरत हो तो पठोरों की चोंच 12 से 16 सप्ताह (3 से 4 माह) की आयु पर काटना चाहिये।
- दड़बों व उसके आसपास की जगह की साफ–सफाई एवं पठोरों के स्वास्थ्य का पूरा ध्यान रखें एवं इस अवस्था में लगने वाले टीके लगवायें।
- इस बात का ध्यान रखें कि पठोरों की बढ़वार अच्छी हो और 18–20 सप्ताह की उम्र पर अण्डा उत्पादन शुरू हो जाये।

4.5 अण्डा देने वाली मुर्गियों का प्रबन्ध

अच्छी नस्ल की मुर्गियां 20 सप्ताह यानी 5 माह की उम्र पर अण्डे देना शुरू कर देती है और एक वर्ष तक अण्डे देती है उसके बाद अण्डा उत्पादन धीरे–धीरे बंद हो जाता है। उन्नत नस्ल की मुर्गी के मुकाबले देशी मुर्गियां 5 माह की उम्र पर अण्डा उत्पादन शुरू करती है, अण्डा उत्पादन जल्दी बंद हो जाता है और अण्डा उत्पादन कम होता है।

मुर्गियों से अधिकतम अण्डा प्राप्त करने के लिये मुर्गियों का उचित रख–रखाव वैज्ञानिक तकनीक द्वारा किया जाना चाहिये। ज्यादा अण्डों के उत्पादन के लिये निम्नलिखित मूल सिद्धांत अपनाने चाहिये।

- मुर्गियों के लिये उचित आवास व्यवस्था का प्रबंध करें। दड़बा साफ रखें। समय–समय पर कीटाणु रहित कर सफेदी करें। सूखे बिछावन का प्रयोग करें। कम जगह पर ज्यादा मुर्गियां नहीं रखें।
- मुर्गियों को भौगोलिक अवस्थाओं के अनुसार गर्मी, सर्दी, वायु के झोंको तथा बरसात की सीधी बौछारों से बचाने हेतु सावधानी बरतें।
- गर्मी और लू से बचाव के लिये फार्म के आसपास छोटे छायादार वृक्ष लगाने चाहिये। मुर्गीघर की छत पर सफेद रंग करें या छत पर घास या धान की पुआल डाल दें। बहुत अधिक गर्मी के दिनों में दाने को पानी में भिगोकर देना अच्छा रहता है। साफ व ठण्डा पानी हमेशा उपलब्ध रहना चाहिये।
- सर्दी से बचाव के लिये मुर्गीघर की खिड़कियों पर टाट के पर्दे लगाना चाहिये। मुर्गियां गर्मी की अपेक्षा सर्दी आसानी से सह लेती है इसलिये गर्मी में मुर्गियों का बचाव ज्यादा जरूरी है।
- मुर्गियों की संख्या के अनुसार साफ दाने व पानी के बर्तन निश्चित स्थान पर रखें।
- संतुलित आहार मुर्गियों को उचित मात्रा में दें। एक मुर्गी 100 से 120 ग्राम दाना प्रतिदिन खाती है। आंगन में मुर्गीपालन करने पर मुर्गियां खेतों में अनाज, कीट, खरपतवार आदि खाकर अपना पेट भरती है परन्तु अधिक अण्डा उत्पादन हेतु कम से कम 40 ग्राम संतुलित आहार उन्हें बर्तन में देना चाहिये।
- अण्डा देने वाली मुर्गियों के लिये पर्याप्त संख्या में घोंसलेनुमा बक्सों का प्रबंध करना चाहिये ताकि मुर्गियां इधर–उधर अण्डा न देकर घोंसले में ही अण्डा दे। प्रत्येक 5 मुर्गियों के लिये 15''–10''–10'' का एक घोंसला उचित रहता है।
- बीमार मुर्गी को तुरंत स्वस्थ मुर्गियों से अलग कर देवें ताकि बीमारी स्वस्थ मुर्गियों में न फैल सके।
- मृत मुर्गियों को गहरे गड्ढे में गाड़कर उसका उचित निस्तारण करना चाहिये।
- दिन में 3 से 4 बार अण्डा एकत्र कर उसका उचित भण्डारण करना चाहिये।
- कम अण्डे देने वाली, बीमार, कमजोर व कम वजन वाली मुर्गियों की छंटनी का काम समय–समय पर करते रहें। अण्डे देने वाली मुर्गियों में छंटनी करते समय निम्न तालिका में दिये गये विवरण को ध्यान में रखें।

क्र. सं.	मुर्गी के शरीर के अवयव	अण्डे देने वाली मुर्गी के लक्षण	अण्डे न देने वाली मुर्गी के लक्षण
1.	स्वास्थ्य	चौकर, फुर्तीली	कमजोर, सुस्त
2.	कलंगी	बड़ी, लाल, मुलायम एवं चमकीली	छोटी, पीली एवं खुरदरी
3.	आँखे	चमकीली	फीकी
4.	वास्ते प्रदेश हड्डिया मुड़ने वाली	कड़ी, 2 अंगुली से कम	2–5 अंगुली चौड़ी
5.	पेट व उसका फैलाव सख्त, पतली व 4 अंगुली से	गहरा, नरम, चमड़ी चर्बीदार	सिकुडा हुआ
6.	चोंच	साफ	पीली
7.	योनी मुख (गुदा)	बड़ा, नम, अण्डे के आकार वाली गोल	सिकुड़ा हुआ, सूखा,
8.	टांगें	पतली, चौड़ी, साफ,	खुरदरी, गोल, पीली

5. रोग नियंत्रणः

मुर्गियों के सफल प्रबन्ध व देखभाल के लिये उनकी स्वच्छता व स्वास्थ्य का ध्यान रखना महत्वपूर्ण है। स्वच्छता से मतलब ऐसा वातावरण तैयार करना है जिससे कि शरीर में कीटाणु, विशाणु व परजीवी से होने वाले रोगों को कम किया जा सके। मुर्गीपालक को सबसे ज्यादा भय मुर्गियों की बीमारियों से रहता है क्योंकि इससे उसे सीधी हानी होती है। बीमारियों से न केवल मुर्गियों को मृत्यु होती है बल्कि इसका बुरा असर चूजों के उत्पादन, विकास और मुर्गियों की उत्पादकता पर भी पड़ता है।

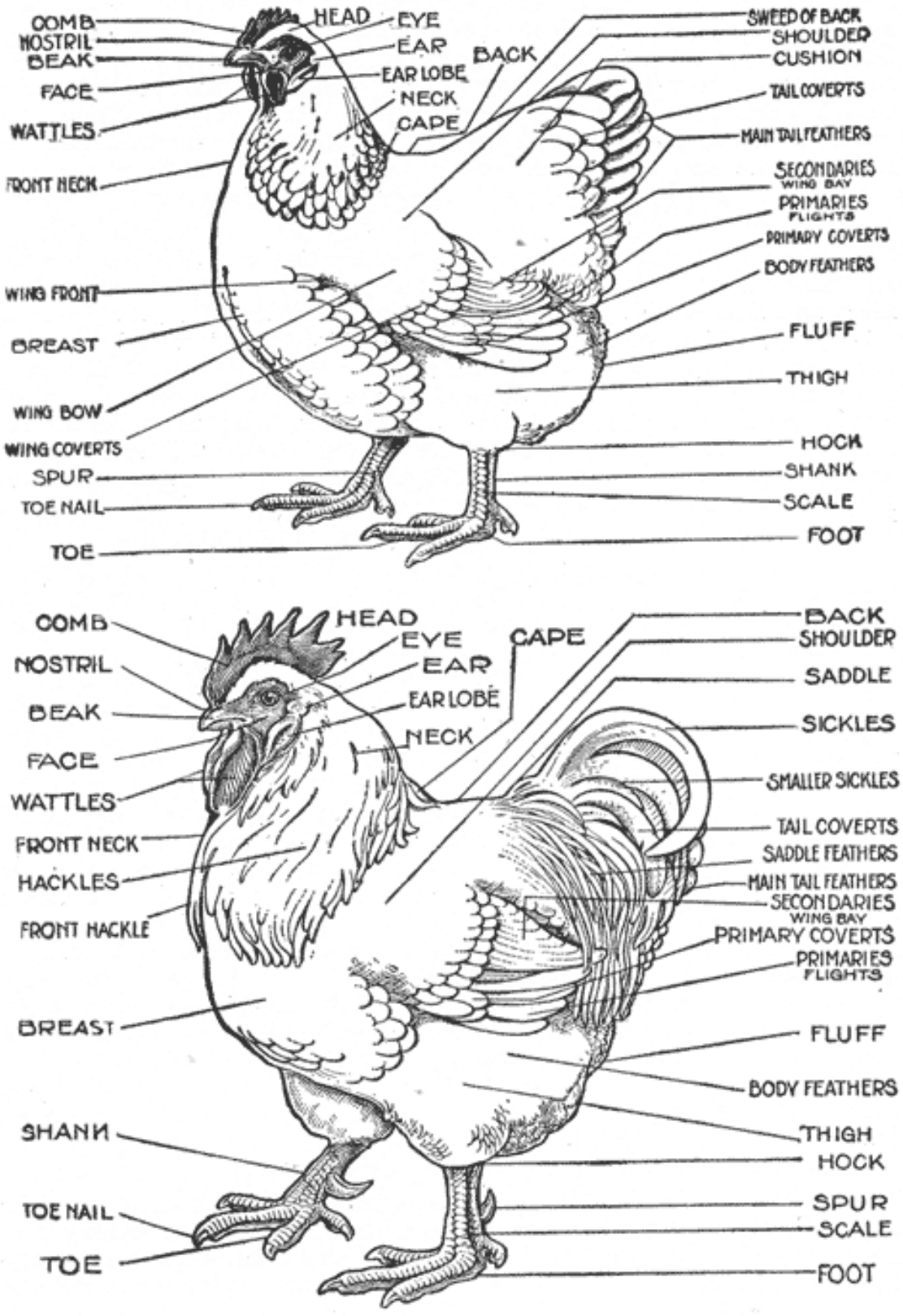

मुर्गी की बाह्य संरचना

5.1 बीमारियों के कारण :

बीमारियाँ कीटाणुओं द्वारा जैसे वायरस, बैक्टिरिया, पेरासाइट्स, प्रोटोजोआ तथा फफूंदी आदि के द्वारा फैलती है।

5.2 बीमारियाँ कैसे फैलती हैं :

जब मुर्गियाँ बीमारियों से ग्रस्त हो जाती है तो बीमार मुर्गियों से बीमारी के कीटाणू बींट, मुंह की लार, जख्मों व खून चूसने वाले जीवों द्वारा बाहर आते है तथा ये कीटाणू दूसरी स्वस्थ मुर्गियों में निम्नलिखित तरीकों से फैलते हैः—

5.2.1 बिछावन : बीमार मुर्गियों की बींट के जरिये बिछावन कीटाणुओं से दुषित हो जाता है और यही मुर्गियों में बीमारी फैलने का प्रमुख कारण होता है। विशेषकर जब बिछावन सीलनयुक्त या गीला हो।

5.2.2 दान व पानी : बीमार मुर्गी की बींट व मुंह से निकली लार आदि से दान व पानी दूशित हो जाते है और यही दाना व पानी का उपयोग जब स्वस्थ मुर्गियाँ करती है तो बीमारियाँ उनमें फैल जाती है।

5.2.3 साथ—साथ रहना : यदि बीमार मुर्गियों को स्वस्थ मुर्गियों के साथ रखा जाये तो बीमारियाँ स्वस्थ मुर्गियों में भी फैल जाती है।

5.2.4 पशु—पक्षियों द्वारा : जंगली पक्षियों, कुत्तें, बिल्लियों, चूहों, मक्खियों, मच्छरों आदि के माध्यम से भी रोग के कीटाणू फैलते हैं और मुर्गियों में रोग फैल सकता है।

5.2.5 मुर्गियों के साज—सामान : दाना एवं पानी के बर्तन, आहार के बोरे, अण्डें की ट्रे आदि भी रोग फैलाने का काम कर सकते है। ये सामान यदि प्रदूषित हों या जब एक फार्म से दूसरे फार्म पर या बीमार मुर्गियों वाले घर से स्वस्थ मुर्गियों के घर लाये जाते है तो बीमारियाँ फैलने के कारण बन सकते है। इसी प्रकार फार्म पर काम करने वाले व्यक्ति द्वारा भी बीमारियों के कीटाणू एक से दूसरी जगह फैल सकते है।

5.3 मुर्गीयों में बीमारी के लक्षण :–

– बीमार चूजे या मुर्गियाँ एक स्थान पर एकत्र होने लगती है। कुछ मुर्गियाँ आँखें बंद करके तथा सिर झुका कर बैठ जाती है।

– बीमार मुर्गियाँ दाना पानी कम खाती–पीती है या पानी पीना बिल्कुल बन्द कर देती है। कुछ बीमारियों के दौरान मुर्गियाँ ज्यादा पानी पीती है।

– बिमारी के दौरान मुर्गियों के पंख ढीले होकर लटक जाते है।

– मुर्गियों के पर की सजावट असंतुलित हो जाती है। कभी–कभी पैर खराब हो जाते है जिसके फलस्वरूप मुर्गियाँ लंगडाते हुए चलती है। खड़े होने में असमर्थ हो जाती है व ज्यादातर बैठी रहती है।

– पेचिश की बिमारी होने पर बींट का रंग हरा, पीला, सफेद या लाल हो जाता है।

– मुर्गियों का वनज कम हो जाता है, अण्डा उत्पादन कम या बन्द हो जाता है।

– मुर्गियों की कलंगी सूख जाती है या उसमें सूजन आ जाती है। उसका रंग बदल जाता है व उसकी चमक कम हो जाती है।

– मुर्गियों के शरीर का तापमान बढ़ जाता है।

– नाक, आँख या मुंह से पानी निकलता है एवं मुर्गियों को सांस लेने में दिक्कत होती है तथा छिंकती है। आँखे चिपक जाती है।

10. बीमारियों के कारण चूजों व मुर्गियों की मृत्यु तक हो जाती है।

5.4 बीमारियों की रोकथामः

मुर्गियों में कई प्रकार की बीमारियाँ होती है। यदि एक बार बीमारी आ जाये और उस पर जल्दी काबू न किया जाये तो इससे बहुत नुकसान हो सकता है। अतः बीमारियों के रोकथाम को सबसे ज्यादा महत्व देना चाहिये। इलाज से बचाव बेहतर होता है। कई बार तो दवा व इलाज का खर्चा मुर्गी की कीमत से भी ज्यादा बैठ जाता है। एक मुर्गीपालक के लिये बीमारी की सही पहचान कर पाना भी संभव नहीं है लेकिन वह बचाव के कुछ ऐसे तरीके अवश्य अपना सकता है, जिससे मुर्गियाँ बीमारियों से बची रहे। इन तरीकों में मुर्गियों का उचित चुनाव, सही दड़बा, संतुलित आहार, बीमार मुर्गियों को अलग रखना, बचाव के टीके लगाना आदि शामिल है। बीमारीयों की रोकथाम के लिये निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये।

5.4.1 कुछ बीमारियाँ माता : पिता से अण्डों के माध्यम से चूजों में आ जाती है। इसलिये चूजा उत्पादन के लिये स्वस्थ मुर्गी से प्राप्त अण्डों का प्रयोग करें अथवा चूजे विश्वसनीय हेचरीज से ही खरीदें।

5.4.2 उचित आवास : बीमारियों के रोकथाम के लिये मुर्गियों के लिये उचित आवास व्यवस्था जरूरी है। निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिये।

– मुर्गियों को उचित जगह दें, कम जगह पर ज्यादा मुर्गियाँ न पालें वरना इसका मुर्गियों के विकास और उत्पादन पर बुरा प्रभाव पडेगा। मुर्गियाँ कमजोर होकर बीमार हो सकती है तथा अनेक बुरी आदतें जैसे नोचना, एक दूसरे को खाना आदि मुर्गियों में आ जायेगी।

– दड़बा हवादार होना चाहिये ताकि मुर्गियों को ताजी हवा मिल सके और गंदी हवा बाहर जा सके। साथ ही बिछावन सूखा रह सके।

– दाना–पानी के पर्याप्त बर्तन होने चाहिये। बर्तन साफ रखें। दाना–पानी को बींट आदि से बचायेंगें तो बीमारियों से बचाव होगा।

– अच्छा, सूखा व भुरभुरा बिछावन मुर्गियों को बीमारी से दूर रखता है। गहरा सूखा बिछावन मुर्गियों को गरमी में ठंडक व सर्दी में गरमी प्रदान करती है। बिछावन गीला होने पर तुरन्त हटा दें व नया बिछावें। समय–समय पर बिछावन उलटते–पलटते रहें।

– मुर्गीघर एवं उसके आसपास सफाई का उचित प्रबन्ध होना चाहिये। समय–समय पर बिछावन बदल दें, कीटाणुनाशक घोल से दडबों व उसके आसपास की जगह का छिड़काव करें व दड़बों के अन्दर सफेदी करायें।

5.4.3 संतुलित आहार : न केवल पोषक तत्वों की कमी में होने वाले रोगों से बचाव करता है बल्कि मुर्गियों को बीमारियों से लड़ने की ताकत भी बनाये रखता है।

5.4.4 बीमार मुर्गियों की छटनी : जब भी बीमार या सुस्त मुर्गी देखें तो उसे अन्य स्वस्थ मुर्गियों से अलग कर देना चाहिये अन्यथा बीमारियाँ स्वस्थ मुर्गियों में भी फैल सकती है।

5.5 मुर्गियों की प्रमुख बीमारियाँ :

यद्यपि मुर्गियों में अनेक प्रकार की बीमारियाँ पायी जाती है किन्तु आम तौर पर अपने देश में होने वाली प्रमुख बिमारियों के नाम इस प्रकार है–

5.5.1 देखभाल की कमी से होने वाली बिमारियाँ : उचित देखभाल न होने से बिमारियाँ लग सकती है जैसे – ठण्डा लगना (चिलिंग), लू (हीट स्ट्रेस) लगना, कैनाबलिजम (पर नोचना) आदि। सही देखभाल न मिलने से मुर्गियों में प्रत्याबल (स्ट्रेस) का असर दिखाई देता है जिसके कारण मुर्गियों में रोग प्रतिरोधक क्षमता की कमी हो जाती है, जिसके कारण अनेक प्रकार के जीवाणु व विशाणु जनित बिमारियाँ लग जाती है।

5.5.2 असंतुलित आहार खाने से होने वाली बिमारियाँ : मुर्गियों को उसकी नस्ल, लिंग और शारीरिक वजन तथा उम्र के हिसाब से संतुलित आहार प्रतिदिन न देने पर उनकी रोगप्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती हैं एवं अनेकों प्रकार की बिमारियाँ उत्पन्न होने लगती है।

5.5.3 परजीवी जनित रोग :

(अ) **बाह्य परजीवी** – जैसे जुएं, किलनी, मक्खी, खटमल, पेरू आदि मुर्गियों के शरीर से खून चूसते है और कुछ सक्रांमक रोग पैदा करते है। मुर्गियों में खून की कमी हो जाती है। खुजली होती है, मुगियाँ कमजोर हो जाती है, शरीर में घाव हो जाता है व अण्डों की पैदावार कम हो जाती है।

(ब) **अन्तः परजीवी** – अन्तः परजीवी जैसे गोल कृमि, फीता कृमि आदि मुर्गियों के शरीर के आहार नली, श्वास नली, आँख आदि में दिखाई देते है और विभिन्न प्रकार की बिमारियाँ पैदा करते है।

5.5.4 जीवाणु जनित रोग – जीवाणु अनेक प्रकार के होते है और उनके कारण होने वाले रोगों में संक्रमण, जुकाम, पूराना जुकाम, किलनी बुखार, फाउल टाइफाइड, काली सेट्टीसीमिया एवं मुर्गी का हैजा रोग प्रमुख है।

5.5.5 फफूंद जनित रोग – फफूंद जनित रोग कभी–कभी प्रकोप के रूप में दिखाई देता है और इससे अधिक हानी होती है। फफूंद मुर्गी फार्म में बिछावन, दाने में इस्तेमाल होने वाले अनाज व खल आदि के जरिये मुर्गियों को प्रभावित करती है। कुछ फफूंद मुर्गी के दाने में विष छोड़ देते है। फफूंद ओर विष के कारण होने वाली बिमारियों में ब्रुडर निमोनिया एवं फफूंदी विषाक्ता प्रमुख है।

5.5.6 विशाणु जनित रोग – मुर्गियों में विषाणुओं से होने वाले रोग का प्रकोप तीव्र और संक्रामक होता है। ऐसे रोगों के उपचार के लिये सही दवाई अभी उपलब्ध नहीं है। इसलिये इन रोगों के टीकों एवं रोकथाम के जरिये ही इन पर नियंत्रण किया जा सकता है। मुर्गियों में विषाणुओं से होने वाली बिमारियों में रानीखेत, गमबोरो, मेरेक्स व चेचक प्रमुख है।

5.5.7 मुर्गियों में टीकाकरण – छोटे स्तर पर मुर्गीपालन के लिये मुर्गियों में निम्नानुसार टीकाकरण किया जाना चाहिये।

उम्र	रोग का नाम	टीकाकरण विधि
1 से 7 दिन	रानीखेत	एक-एक बूंद नाक व आंख में
1 दिन में	रेक्स	0.2 मिली दवा गर्दन के पीछे चमड़ी के नीचे
6 सप्ताह	रानीखेत	0.2 मिली दवा छाती की मांसपेशी या परों की खाल के नीचे
8 सप्ताह	चेचक	पंखों के नीचे दवा भेदी जाती है।

पिंजरा पद्धति

डीप लीटर सिस्टम

स्वस्थ मुर्गियों की पहचान

- सामान्य वजन, चैतन्यता, फुर्तीलापन, हाथ से पकड़ने पर संघर्ष करना तथा उठाते समय टांगों में प्रचलन शक्ति का आभास होना।
- चेहरा भरा हुआ,नासिका साफ व म्यूकस रहित, आंखों में ज्योति और अधिक प्रकाश होने पर तुरन्त नेत्रों का व्यवस्थापन होना।
- कलंगी व गलकम्बल साफ, चमकदार एवं दीप्त लाल रंग की होती है।
- पंख साफ–सुथरे एवं व्यवस्थित, चमड़ी चमकदार एवं पिगमेंट वाली होती है।
- टांगे समान, चमकदार, साफ व भरी हुई होती है।
- मुर्गियां बराबर दाना खाती है, पानी पीती है तथा क्रॉप भरी हुई होती है।
- बींट–सफेद रंग लिये हुए मटमैले भूरे रंग की बंधी हुई होती है।

अस्वस्थ मुर्गियों के लक्षण

- वजन में कमी, सुस्ती एवं उदासी, उठाते समय संघर्ष न करना, सांस लेते समय व्याकुलता तथा शारीरिक तापमान कम या अधिक होना।
- पेट फूला हुआ या जल से भरा हुआ, नासिका में म्युकस, नेत्र सुस्त व सूजे हुए होना।
- कलंगी सिकुड़ी या मुरझाई हुई पीले या नीले रंग की एवं गलकम्बल में सूजन का होना।
- पंख झुके हुए मैले से रंग के तथा चर्म में सूजन–सी दिखाई देना।
- टांगों में सूजन का मिलना तथा लंगड़ा कर चलना।
- आहार उपयोग कम या बन्द तथा अधिक प्यास लगना।
- हरे, पीले, सफेद–रंग की बींट, दस्त के रूप में पतली बीट होना।

रोगों से बचाव हेतु
सामान्य जानकारियां

- ❒ कुक्कुट फार्म में स्वच्छता एवं कीटाणुनाशन की प्रक्रिया से ही रोगों से बचाव किया जा सकता है।
- ❒ कुक्कुट फार्म पर चूजे लाने से पहले यह सुनिश्चित करें कि जिस हेचरी से चूजे लेने हैं, वहां गत तीन माह के दौरान किसी प्रकार का रोग न हुआ हो।
- ❒ कुक्कुट घर के प्रवेश द्वार पर फुट बाथ हेतु सोडियम हाइड्रोक्साइड का घोल रखें।
- ❒ फार्म के मुख्य प्रवेश द्वार पर वाहन को कीटाणु रहित करने के पश्चात् ही परिसर में प्रवेश करने दिया जाये।
- ❒ आगन्तुक के कुक्कुट फार्म में प्रवेश पर नियन्त्रण रखें। यदि प्रवेश आवश्यक हो तो गमबूट/शू–कवर, डिस्पोजेबल कपड़े, मास्क आदि पहना कर व हाथ साबुन से धोने एवं कीटाणु नाशक घोल (लाल दवा, डिटोल, सेवलोन आदि) से कीटाणु रहित करने के पश्चात् प्रवेश करने दिया जावे।
- ❒ कुक्कुट फार्म में बाहर से आने वाले सामान जैसे अण्डे की ट्रे, पिंजरे, अन्य उपकरण आदि को कीटाणु रहित कर उपयोग में लेवें।
- ❒ कुक्कुट फार्म परिसर में कुत्ते, बिल्ली व अन्य जंगली जानवर आदि को प्रवेश नहीं करने दिया जावे। मुर्गियों को प्रवासी पक्षी, वाटर फाउल, बतख आदि के सम्पर्क में न आने दिया जावें।
- ❒ कुक्कुट फार्म परिसर में खरपतवार की सफाई करावें व चूहों की रोकथाम के उपाय करें।

- ❒ कुक्कुट फार्म में मृत पक्षियों, संक्रमित लिटर, खराब अण्डे आदि के निस्तारण हेतु डिस्पोजल पिट् बनाकर निस्तारित करें अथवा जलाकर या गहरे गढ्ढे में कीटाणुनाशक दवा/चूने के साथ गाड़ कर नष्ट कर दिया जाना चाहिये।

रोगग्रस्त क्षेत्रों में कुक्कुट पालन हेतु ऑल इन ऑल आऊट पद्धति अपना कर कुक्कुट फार्म को पूर्ण रूप से कीटाणु रहित करना चाहिये।

- ❒ इसमें फार्म के सभी पक्षियों को एक साथ विक्रय/निस्तारित करने के तीन सप्ताह पश्चात् पुनः नया बैच लाना चाहिये।
- ❒ प्रथम सप्ताह में कुक्कुट घर का पुराना लिटर (बिछावन) बाहर निकाल कर फर्श अच्छी तरह से पानी एवं साबुन (डिटरजेंट) के घोल से साफ करना चाहिये। फर्श एवं दीवारों से बींट आदि रगड़ कर अच्छी तरह साफ करना चाहिये।
- ❒ द्वितीय सप्ताह में दीवारों एवं फर्श पर कीटाणु नाशक (क्वाटरनरी अमोनियम साल्ट के 4% क्रिसोलिक एसिड के 2.2%/ सिन्थेटिक फिनोल के 2%) घोल का छिड़काव करें। सभी दाने–पानी के बरतन व अन्य उपकरणों को भी साफ कर कीटाणु रहित करें व धूप में रखें।
- ❒ तीसरे सप्ताह में दीवारों व छत पर चूने के घोल से सफेदी करनी चाहिये। कुक्कुट घर को चारों तरफ से बन्द कर फ्यूमिगेशन करना चाहिये। 60–70 ग्राम पोटशियम परमेंगनेट (लाल दवा) में 120–150 मिलि लीटर फार्मेलिन मिलाकर प्रति 100 घन फीट क्षेत्र के लिये उपयोग करते हैं।

विषाणु जनित रोग

बर्ड फ्लू

यह इन्फ्लूऐन्जा–ए वायरस से होने वाला पक्षियों का अतिसंक्रामक रोग है। इससे पक्षियों में 100% तक मृत्यु दर हो सकती है। यह रोग मुख्यतः मुर्गियों एवं टर्की में होता है। बतख, वाटर फाउल व अन्य प्रवासी पक्षियों में भी इन्फ्लूऐन्जा वायरस का संक्रमण होने से ये रोग फैलाते हैं।

रोग कैसे फैलता है?

- इस रोग के वायरस रोगी पक्षी की लार, नाक/आँख के स्राव व बींट में पाया जाता है।
- रोगी पक्षी के सीधे सम्पर्क से अथवा संक्रमित बींट व नाक/आँख के स्राव के संपर्क में आये व्यक्ति, आहार, पानी, उपकरणों आदि से यह रोग फैलता है।
- रोग के संक्रमण पर 3–5 दिन में लक्षण दिखाई देते हैं।

रोग के लक्षण :

- अचानक अधिक संख्या में पक्षियों की मृत्यु (100% तक)।
- पक्षी सुस्त होकर खाना पीना बन्द कर देते हैं।
- अण्डा उत्पादन में अत्यधिक कमी।
- पक्षी के तीव्र जुखाम व नासाछिद्र व आँख से स्राव।
- पक्षी के सिर व गर्दन पर सूजन आना।
- कलंगी व लटकन पर सूजन एवं नीलापन आ जाता है।

उपचार :

बर्ड फ्लू रोग का उपचार नहीं है, अतः बचाव ही उपचार है।

बर्ड फ्लू होने की संभावना की स्थिति में कुक्कुट पालक क्या करें?

* रोग की जाँच हेतु पशु चिकित्सक के द्वारा सैम्पल भिजवायें।
* जाँच रिपोर्ट आने तक फार्म पर किसी भी व्यक्ति (कुक्कुट पालक के अतिरिक्त), वाहन आदि को प्रवेश न करने देवें।
* कुक्कुट फार्म पर रोग की संभावना होने पर पक्षियों को क्वारन्टाइन में रखना चाहिये।
* फार्म से पक्षी, अण्डे, लिटर, उपकरण आदि का आवागमन/बेचान न करें।
* जैव सुरक्षा व कीटाणु नाशन के सभी उपाय करें।
* फार्म पर कार्य करने वाले व्यक्ति को मास्क डिस्पोजेबल कपड़े, शू–कवर, ग्लव्ज आदि पहनकर कार्य करना चाहिये एवं कार्य उपरान्त फार्म के बाहर निकलने पर इन्हें निस्तारित कर देना चाहिये एवं स्वयं की सफाई एवं कीटाणुनाशन प्रक्रिया का ध्यान रखना चाहिये।
* रोग की पुष्टि होने पर पशुपालन विभाग के निर्देशानुसार सभी पक्षियों, अण्डों, लिटर, दाने आदि का निस्तारण कराकर पूर्ण कीटाणुनाशक प्रक्रिया को अपनायें।

रानीखेत रोग
(न्यूकेसल डिजीज)

यह बीमारी सभी उम्र की मुर्गियों व टर्की में समान रूप से पाई जाती है। यह एकदम तीव्र गति से फैलने वाली, भयंकर छूतदार बीमारी है, जिसमें तंत्रिका तंत्र व श्वसन तंत्र दोनों प्रभावित होते हैं।

कारण – यह रोग वाइरस (मिक्सोवाइरस) जनित है। इस रोग का इन्क्यूबेशन पीरियड (रोग के विषाणु शरीर में प्रवेश के समय से लेकर रोग के लक्षण स्पष्ट होने तक का समय) 5 से 7 दिन है।

प्रसार – वायु द्वारा।

– बीमार मुर्गियों के साथ स्वस्थ पक्षी रखने पर।

– मृत मुर्गी को, खुले में छोड़ने से।

– बीमार पक्षियों के आहार व पानी के बरतनों एवं संक्रमित लिटर द्वारा।

– मुर्गी शाला के पास रोगी जंगली पक्षियों द्वारा।

– मुर्गियों की देखभाल करने वाले मनुष्यों तथा आगन्तुकों द्वारा।

– रोगी पक्षियों की बींट, आँसू, नाक एवं मुंह से निकलने वाले स्राव से।

लक्षण – इस रोग के चार रूप होते हैं :–

(i) विरूलेंट फार्म या उग्र रूप (एशियन टाईप)

– इस अवस्था में मृत्यु दर 100% तक हो सकती है।

– बीमारी 3–4 दिन तक रहती है तथा कभी–कभी एक ही दिन में सब मुर्गियाँ मर जाती है।

- इस अवस्था में तेज बुखार होता है।
- मुर्गियों को श्वास लेने में कष्ट होता है और मुँह खोलकर श्वास लेती है तथा श्वास के साथ विशेष आवाज होती है।
- असामान्य अण्डे एवं अण्डा उत्पादन में कमी हो जाती है।

(ii) मिसोजेनिक फार्म या अपेक्षाकृत कम हानिकारक रूप (अमेरिकन टाईप)

- इस अवस्था में मृत्यु दर 5–20% तक होती है।
- श्वास लेने में कठिनाई होती है।
- हरे रंग के दस्त होते हैं।
- अण्डा उत्पादन में कमी होती है।
- पंख व पैरों में लकवा हो सकता है।

(iii) लेण्टोजनिक फार्म या कम प्रभावी रूप

- इस अवस्था में मृत्युदर बहुत कम होती है।
- हल्के श्वास रोग के लक्षण दिखाई देते हैं।
- अण्डा उत्पादन में कमी हो जाती है।

(iv) एसिम्प्टोमेटिक या अलक्षणिक फार्म

- इस अवस्था में प्रायः कम आयु के पक्षी प्रभावित होते हैं।
- इस अवस्था में लक्षण स्पष्ट नहीं होते हैं।

– खांसी आना,

– उल्टा चलना,

– सिर लटकाकर दोनों टांगों के बीच रखना आदि लक्षण देखे जा सकते हैं।

उपचार – इस रोग का कोई उपचार नहीं है। अतः वैक्सीनेशन (टीकाकरण) आवश्यक है।

टीकाकरण – आर.डी. की रोकथाम के लिये एफ, टाईप, लसोटा, आर2बी और एन.डी. किल्ड आदि वैक्सीन का उपयोग किया जाता है। लेयर एवं ब्रीडिंग स्टॉल की मुर्गियों में अण्डे शुरू होने के समय एन.डी. किल्ड वैक्सीन का उपयोग रोग की रोकथाम हेतु बहुत उपयोगी है। साथ ही 7 दिन, 28 दिन व 10 सप्ताह की उम्र में भी टीकाकरण किया जाना चाहिये।

– ब्रायलर में 7 दिन की उम्र में आर.डी. का टीकाकरण किया जाना पर्याप्त है।

फाउल पॉक्स

यह छोटी–छोटी फुंसियों की बीमारी है जो कलंगी, गलकम्बल, आँख की पुतलियों और सिर की त्वचा पर हो जाती है। यह रोग हर उम्र की मुर्गियों में हो सकता है।

कारण – यह रोग वाइरस (पॉक्स वायरस) द्वारा होता है।

प्रसार – रोगी मुर्गी के सम्पर्क से रोग फैलता है।

– मच्छर, बाह्य परजीवी तथा जंगली पक्षी भी रोग प्रसारण में सहायक होते हैं।

लक्षण – यह रोग तीन प्रकार का होता है।

(i) चर्म रूप – यह सामान्य प्रकार है। इसमें कलंगी, चेहरा तथा गलकम्बल, गुदा, डैनों के भीतरी भाग में हल्के भूरे रंग के छोटे–छोटे दाने निकल आते हैं। ये बाद में पीले रंग के हो जाते हैं। तत्पश्चात् 3–4 सप्ताह बाद दाने सूखने लगते हैं।

(ii) मुख रूप – इसमें मुँह के अन्दर की झिल्ली पर दाने तथा जीभ पर छाले हो जाते हैं। मुखगुहा, गले एवं नासिका से गाढ़ा मवादयुक्त स्राव निकलता है।

– सांस लेने में कष्ट होता है।

(iii) आँख रूप – आँखों से पानी बहता है।

– आँखों व पलकों पर दाने निकलते हैं।

– तापक्रम में वृद्धि।

– आहार के प्रति अरुचि।

– अण्डा उत्पादन में कमी।

– उग्र रूप में मृत्यु भी हो सकती है।

टीकाकरण – लेयर पक्षियों में 6 से 8 सप्ताह की उम्र पर फाऊल पॉक्स रोग के बचाव हेतु विंग वेब में टीकाकरण किया जाना चाहिये।

उपचार – रोग से बचाव ही उपचार है। अतः लेयर पक्षियों में टीकाकरण आवश्यक है।

इन्फेक्शियस ब्रोन्काइटिस
(आई.बी.)

यह अति तीव्र रूप की बीमारी हर उम्र के पक्षी को हो सकती है। यह अतिशीघ्र फैलने वाला श्वास रोग है। यह रोग सर्दी में अधिक होता है।

कारण – यह रोग वायरस (कोरोना ग्रुप) के कारण होता है।

– यह प्रायः चार सप्ताह से कम उम्र वाले चूजों को ज्यादा ग्रसित करता है।

प्रसार – संक्रमित उपकरणों, दाना–पानी आदि से तथा वायु द्वारा रोग फैलता है।

लक्षण – श्वांस लेने में कठिनाई तथा श्वांस में एक विशेष प्रकार की आवाज पायी जाती है जिसे गैस्पिंग राल्स कहते है।

– आँख और नाक से पानी बहता है तथा सूजन हो जाती है।

– चूजे छींकते व हांफते हुए दिखाई देते हैं।

– आहार उपभोग में कमी, एल्बुमिन पतला एवं अण्डा उत्पादन कम हो जाता है, जो 3–4 सप्ताह में सामान्य हो जाता है।

– अण्डे का असामान्य छिलका।

– अधिकांश रोगग्रस्त चूजे मर जाते हैं और जो बच जाते हैं वे इस रोग के वाहक रहते हैं।

– दस्त लक्षण।

– इस रोग के लक्षण रानीखेत रोग से मिलते हैं। किन्तु रानीखेत में मृत्युदर ज्यादा होती है तथा अण्डा उत्पादन बिल्कुल बन्द हो जाता है और साथ ही लकवे के लक्षण भी दिखाई दे सकते हैं।

टीकाकरण – इस रोग की रोकथाम के लिये लेयर पक्षियों में प्रायः 21 दिन पर, 13 सप्ताह और 19 सप्ताह की आयु में टीकाकरण किया जाना चाहिये।

मैरेक्स रोग

यह एक अत्यन्त जटिल कैंसर की तरह का रोग है जो सामान्यतः धीरे–धीरे फैलकर पक्षियों के किसी भी बाहरी और भीतरी अंगों को प्रभावित कर उसके स्वाभाविक रूप में परिवर्तन कर देता है। परिणामस्वरूप पक्षी क्रमशः दुर्बल एवं कमजोर होकर मर जाता है। यह रोग 2 से 4 माह के पक्षियों में अधिक होता है।

कारण – यह रोग वायरस (हरपीज वायरस) द्वारा फैलता है।

प्रसार – मुर्गी के पंखों द्वारा रोग फैलता है।

– संक्रमित लार, मल एवं हवा द्वारा भी यह रोग फैलता है।

– मक्खी, मच्छर, बींट, लिटर तथा सम्पर्क द्वारा यह रोग फैलता है।

लक्षण – कई चूजे बिना किसी लक्षण के भी मर जाते हैं।

– अधिकांश रोगी पक्षियों के पैरों, पंखों, गर्दन आदि अंगों में आंशिक अथवा पूर्ण लकवा पाया जाता है।

– लकवे के कारण मुर्गियां आहार–पानी उचित मात्रा में ग्रहण नहीं कर पाती है।

– बीमारी का प्रथम लक्षण असाधारण पंख एवं बढोतरी है।

– रोग के क्रानिक रूप में लक्षण तीन माह की उम्र के पक्षियों में अधिक पाये जाते है। एक पैर आगे रह सकता है तथा एक मुड़ा हुआ भी रह सकता है। पंख गिरे हुए रहते हैं।

– पक्षी लंगड़ा कर चलता है।

– श्वास लेने में कठिनाई तथा क्रॉप भरी रहती है।

– आँखें सूजी व स्लेटी रंग की प्रतीत होती है (फिश आई या पर्ल आई)।

– अन्दरूनी आंगों में सूक्ष्म से लेकर बड़े ट्यूमर पाये जाते हैं।

टीकाकरण – एक दिन के चूजे को हेचरी में ही इस रोग से बचाव हेतु टीकाकरण किया जाना चाहिये।

– इस रोग का टीका ब्रायलर व लेयर दोनों प्रकार की मुर्गियों में लगाना चाहिये।

गम्बोरो रोग

यह भयंकर छूतदार बीमारी है जो कि चूजों में ज्यादा होती है। सामान्यतया 2 सप्ताह से 15 सप्ताह के पक्षियों में यह रोग होता है।

कारण – यह रोग वायरस (रियो वायरस) द्वारा होता है।

प्रसार – यह भयंकर छूतदार बीमारी है जो कि कुक्कुटशाला में उपस्थित वायरस के कारण व सम्पर्क द्वारा फैलता है।

– वायरस मुँह, आँख तथा श्वसन तंत्र द्वारा शरीर में पहुंचता है।

– संक्रमित लिटर, पक्षी, मनुष्य तथा उपकरणों द्वारा भी रोग प्रसारित होता है।

लक्षण – रोग के लक्षण 3–6 सप्ताह की आयु में प्रकट होते हैं।

– पक्षी सुस्त हो जाते हैं।

– भूख में कमी हो जाती है।

– पक्षियों के शरीर में पानी की कमी, प्यास अधिक लगती है और कंपकंपी आती है।

– पंख अव्यवस्थित दिखाई पड़ते हैं।

– बीमार पक्षी वेंट को बार–बार प्रिक करता है।

– चूने जैसी सफेद बींट होती है।

– मृत्युदर 20% तक हो जाती है तथा 5–10 दिन बाद लक्षण खत्म हो जाते हैं।

टीकाकरण – गम्बोरो रोग का वायरस अत्यन्त कठोर वायरस है। इसके संक्रमण को मुर्गी फार्म से दूर करने में काफी परेशानी आती है। क्लोरीन डिसइन्फैक्टैन्ट से ये वायरस अत्यधिक प्रभावित होते हैं। अतः टीकाकरण आवश्यक है।

– रोग की रोकथाम के लिये चार वैक्सीन स्ट्रेन–माइल्ड, इन्टर मीडियेट, इन्वेसिव इन्टर मीडियेट (लेयर और ब्रायलर के लिये) एवं हॉट स्ट्रेन वैक्सीन का उपयोग होता है। वैक्सीन का निर्णय पशु चिकित्सक की सलाह पर एरिया विशेष में रोग की स्थिति के आधार पर करना चाहिये।

इन्फेक्शीयस लेरिंगो ट्रेकिआईटिस (आई.एल.टी.)

यह भयंकर छूतदार कण्ठरोधक एवं शीघ्र फैलने वाली श्वास की बीमारी है। यह रोग रानीखेत से मिलता–जुलता है। यह अधिकतर 5–10 माह की उम्र की मुर्गियों में ज्यादा होता है।

कारण – यह रोग वायरस (हर्पीज वायरस) द्वारा होता है।

प्रसार – संक्रमित, दाना–पानी, उपकरण और रोग ग्रसित मुर्गियों के सम्पर्क से फैलता है।

– हवा के माध्यम से भी यह रोग फैलता है।

– ठीक हुई मुर्गी रोग का स्त्रोत बनी रहती है।

लक्षण – यह बीमारी तीव्र, अनुतीव्र तथा जीर्ण रूप में होती है।

– नासाछिद्र एवं आँखों से मवादयुक्त स्त्राव निकलता है।

– रोगग्रस्त पक्षी खाँसते व छींकते हैं और अधिकतर रात्रि में उन्हें श्वास लेने में कठिनाई होती है।

– उग्र रूप में पक्षी हाँफते हैं। गर्दन को आगे की और बढ़ाकर सिर को ऊपर उठाकर तथा चोंच खोलकर मुँह से साँस लेते हैं।

– एक विशेष प्रकार की आवाज करते हैं तथा खाँसी के साथ रक्तरंजित म्युकस बाहर आता है। अधिकांश मुर्गियाँ दो सप्ताह में ठीक हो जाती है।

टीकाकरण – रोग से बचाव हेतु लाइव वैक्सीन किया जाना उपयोगी है।

लीची रोग

यह चूजों की एक संक्रामक बीमारी है, जिसमें मुर्गियों का यकृत व दिल प्रभावित होता है। मृत्यु दर 100 प्रतिशत तक हो सकती है।

कारण – यह बीमारी विषाणु (एडीनो वायरस समूह) जनित है।

प्रसार – इस बीमारी का प्रसार खाने–पीने के बर्तनों द्वारा होता है।

लक्षण – यह बीमारी मुख्यतः 3–6 सप्ताह के उम्र के चूजों में ज्यादा होती है।

– यह ब्रॉयलर चूजों में अधिक होता है।

– चूजे सुस्त एवं उदास हो जाते हैं।

– इस बीमारी में चूजों में बिना किसी लक्षण के अत्यधिक मृत्यु दर हो जाती है।

– चूजे आँख बंद कर सीने एवं चोंच को जमीन पर रखकर एक विशेष मुद्रा में बैठते हैं।

– दिल के चारों ओर जैलीनुमा पानी भर जाता है तथा दिल (हृदय) छिले हुए लीची के फल के सदृश्य दिखाई देता है।

– मुर्गी के गुर्दे भी खराब हो जाते हैं।

– मुर्गियों में रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है।

टीकाकरण – लीची रोग से बचाव व रोकथाम हेतु एच.पी. वैक्सीन का उपयोग 7 दिन के चूजे में किया जाना चाहिये।

जीवाणु जनित रोग

इन्फैक्शीयस कोराइजा

यह मुर्गियों की एक संक्रामक बीमारी है, जिसमें मुख्यतः 12–20 सप्ताह तक के पक्षी अधिक प्रभावित होते हैं। इसमें मुर्गियाँ अधिक संख्या में रोग ग्रसित होती हैं, परन्तु मृत्यु दर 50% तक हो सकती है।

कारण – यह रोग हीमोफिलिस–पेरागेलिनेरम नामक जीवाणु द्वारा होता है।

प्रसार – रोग ग्रसित मुर्गियों के सम्पर्क द्वारा यह रोग फैलता है।

– खाने–पीने के बर्तनों द्वारा।

– तेज हवा, नमी, टीकाकरण, स्थान परिवर्तन, पेट में कीड़े आदि कारणों से तनाव (स्ट्रेस) होने के कारण कोराइजा रोग हो जाता है।

– विटामिन 'ए' की कमी से भी यह रोग हो सकता है।

लक्षण – छींक आना तथा नासिका छिद्रों का बन्द होना।

– नाक पर बदबूदार चिकना तरल पदार्थ पाया जाता है, जो नाक के चारों ओर जमा होकर सूख जाता है।

– आँखों में भी पीले रंग का तरल जम जाता है, जिससे आँखों के चारों ओर सूजन आ जाती है। यह सूजन कलंगी तथा गलकम्बल तक फैल जाती है।

– श्वांस नली में तथा तालू पर भी गाढ़ा पदार्थ जमा हो जाने के कारण मुर्गियों को साँस लेने में बड़ा कष्ट होता है।

– चोंच खोलकर श्वास लेते हैं व एक विशेष प्रकार की आवाज करते हैं।

– अण्डा उत्पादन में कमी।

टीकाकरण – प्रायः कोराइजा का पहला टीका लेयर पक्षियों में ग्रोवर मुर्गी को केज में भेजने से पहले लगाना चाहिये।

– रोग प्रकोप होने वाले क्षेत्र में 12 सप्ताह की आयु पर वैक्सीन लगाया जाता है, जिसे 4–5 सप्ताह पश्चात् पुनः लगाना चाहिये।

उपचार – कुक्कुट फार्म पर रोग की जानकारी होने पर तुरन्त पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर निदान करवाये। पशु चिकित्सक की सलाह पर एन्टीबायोटिक्स का उपयोग कर रोग पर नियंत्रण किया जा सकता है।

फाउल कॉलरा

यह एक संक्रामक बीमारी है। इसमें एक साथ कई मुर्गियाँ रोग ग्रसित होती हैं तथा एक साथ बहुत–सी मुर्गियाँ मर जाती हैं।

कारण – यह रोग पास्चुरेला मल्टोसिडा नामक जीवाणु द्वारा होता है।

प्रसार – रोगी पक्षियों के सम्पर्क में आने से।

– एक ही जगह पर अत्यधिक मुर्गियों को रखने तथा खाने–पीने के बर्तनों द्वारा।

लक्षण – तीव्र रूप में एक साथ कई मुर्गियाँ बैचेन हो जाती है।

– शरीर के तापमान में बढ़ोतरी।

– रोगी मुर्गियों को अधिक प्यास लगती है।

– हरे–पीले रंग के दस्त होते हैं।

– कलंगी तथा गलकम्बल में सूजन आ जाती है तथा उनका रंग बैंगनी हो जाता है।

– साँस लेने में तकलीफ होती है।

टीकाकरण – रोग प्रकोप वाले क्षेत्र में 12 सप्ताह की आयु पर वैक्सीन लगाया जाता है। जिसे चार पांच सप्ताह पश्चात् पुनः लगाना चाहिए।

उपचार – कुक्कुट फार्म पर रोग की जानकारी होने पर तुरंत पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर निदान करवायें। पशु चिकित्सक की सलाह पर एंटीबायोटिक्स का उपयोग कर रोग पर नियंत्रण किया जा सकता है।

पुलोरम रोग
(बेसिलरी व्हाइट डायरिया)

यह तेजी से फैलने वाला भयंकर संक्रामक रोग है, जिससे चूजों में 50–100% तक मृत्यु हो सकती है। इसमें भूख–प्यास की कमी एवं लसीले चिपकाऊ दस्त हो जाते हैं।

कारण – यह रोग सालमोनेला नामक जीवाणु के कारण होता है।

प्रसार – यह रोग इस जीवाणु से ग्रसित अण्डों द्वारा प्रसारित होता है।

– संक्रमित बींट द्वारा, प्रदूषित अण्डे के छिलकों से यह रोग फैलता है।

– रोग ग्रसित मुर्गियों के सम्पर्क से।

– प्रदूषित दाना–पानी या लिटर द्वारा इस रोग का प्रसार होता है।

लक्षण – चूजों को प्यास अधिक लगती है।

– आहार उपभोग में कमी।

– श्वास लेत समय हाँफते हैं और अधिकतर चूजे ऊँघते हुए प्रतीत होते हैं।

– रोगी पक्षियों के पंख बिखरे–बिखरे व लटके रहते हैं और कॉम्ब पर पीलापन नजर आता है।

– सफेद भूरे दस्त लग जाते हैं तथा गुदा के पास मल लगा हुआ दिखाई देता है। मल त्याग के दौरान पक्षी का दर्द से चिल्लाना (थ्रिल क्राई)।

– पक्षी ब्रूडर में एकत्रित रहते हैं।

उपचार – चूजे ऐसी हैचरी से लेने चाहिये, जो पुलोरम जीवाणु से मुक्त रहे।

– कीटाणुनाशन प्रक्रिया को अपनाये। रोग के निदान पश्चात् पशु चिकित्सक की सलाह से उपचार कराये।

ई–कोलाई संक्रमण

पक्षियों का यह एक जीवाणुजनित रोग है, जिससे कई प्रकार के संक्रमण पक्षियों में हो सकते हैं। इस जीवाणु द्वारा कोली बेसीलोसिस, एगपेरीटोनाइटिस, एयर सेक्यूलाइटिस, सालपिंजाइटिस, हजारे डिजीज आदि रोगों के लक्षण देखे जा सकते हैं। सामान्यतः यह जीवाणु पशुओं, पक्षियों एवं मनुष्यों आदि के पेट एवं आँतों में पाया जाता है। स्ट्रेस एवं अन्य अवस्थाओं में होस्ट को संक्रमित कर विभिन्न रोग प्रकट करता है।

कारण – एश्केरिया कोलाई, ग्राम नेगेटिव रोड के आकार के जीवाणु।

प्रसार – इस रोग का प्रसार अण्डों के माध्यम से हो सकता है, जिससे चूजों में अत्यधिक मृत्यु दर देखी जा सकती है।

– लिटर व बींट रोग को फैलाने में सहायक है।

– मुंह एवं हवा के माध्यम से यह संक्रमण फैल सकता है।

लक्षण – **कॉलीसेप्टीसीमिया–** रक्त में इस जीवाणु के मिलने से यह अवस्था प्रकट होती है एवं इसमें सर्वप्रथम गुर्दों एवं हृदय की झिल्ली में सूजन तथा हृदय में स्ट्रा कलर का तरल पदार्थ मिलता है।

– **एयरसेक्यूलाइटिस–** रक्त से अथवा सीधे ही श्वांस नली से यह जीवाणु फेफड़ों में पहुंचकर एयरसेक्यूलाइटिस नामक रोग प्रकट करता है, जिसमें उत्पादन कम होना, खांसी आना तथा रेटलिंग आदि लक्षण दिखलाई देते हैं।

– **सेप्टिसीमिया–** के कारण ओवीडक्ट में भी यह संक्रमण पहुंच जाता है, जिससे अण्डा उत्पादन कम हो जाता है।

– चूजे की नाभि द्वारा संक्रमण प्रवेश कर ओमफलाइटिस रोग के लक्षण दिखलाता है, जबकि एयरसेक्यूलाइटिस के प्रभाव के साथ पेरेटोनियम झिल्ली में सूजन पाई जाती है, जिसे एगपेरीटोनाइटिस कहते हैं।

– **एंट्राइटिस–** ई. कोलाई का आंतों में संक्रमण एंट्राइटिस नामक रोग पैदा करता है, जिससे आंतों के अन्दर की सतह पर सूजन पाई जाती है व पक्षी पतली बींट जैसे लक्षण करता है। इस अवस्था में आंतों में अन्य संक्रमण जैसे कि आइमेरिया प्रजाति के लगने की संभावना रहती है।

– **कोलोग्रेन्यूलोमा अथवा हजारे डिजीज–** आंतों एवं लीवर पर जगह–जगह ट्यूमर जैसी गांठें दिखाई पड़ती हैं। इस अवस्था को कोलोग्रेन्यूलोमा कहते हैं।

उपचार – कुक्कुट फार्म पर रोग की जानकारी होने पर तुरन्त पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर निदान करवाये। पशु चिकित्सक की सलाह पर ऐन्टीबायोटिक्स का उपयोग कर रोग पर नियंत्रण किया जा सकता है।

फाउल टायफॉइड

यह व्यस्क मुर्गियों में हरे–पीले रंग के दस्तों की छूतदार बीमारी है। यह पुलोरम से मिलती–जुलती बीमारी है।

कारण – सालमोनेला गैलिनेरम नामक जीवाणु के कारण यह रोग होता है।

प्रसार – दूषित खाना–पानी के कारण मुर्गियाँ इस रोग से ग्रसित होती है।

– यह रोग अण्डे में संक्रमण द्वारा छोटे चूजों में फैलता है।

– इस रोग का प्रसार बीमार मुर्गियों से स्वस्थ मुर्गियों में तथा एक–दूसरे के सम्पर्क द्वारा होता है।

लक्षण – पंखों का अव्यवस्थित होना।

– आहार उपभोग में कमी होना एवं प्यास बढ़ जाती है।

– मुर्गियों का एकान्त स्थान में रहना।

– हरा–पीला दस्त होना।

– आंतों व यकृत में सूजन के कारण एक–दो हफ्ते में मृत्यु हो जाती है।

उपचार – ब्रीडिंग की मुर्गियों में इस रोग के नियंत्रण के लिये अंडे उत्पादन के 20 प्रतिशत के स्तर पर प्रत्येक मुर्गी का रक्त पुलोरम एन्टीजन द्वारा टैस्ट किया जाता है, जो पक्षी पोजीटिव निकलते हैं, उनको ब्रीडिंग के लिये प्रयोग में नहीं लेना चाहिये।

– पशु चिकित्सक की सलाह पर उचित औषधि द्वारा उपचार किया जा सकता है।

मुर्गियों में परजीवी रोग

अनेक प्रकार के परजीवी मुर्गियों के शरीर में निवास करते हैं, जोकि मुर्गियों के रक्त का शोषण करते हैं। इनमें बैचेनी पैदा करते हैं तथा विविध प्रकार के रोग फैलाने में सहायक होते हैं।

इन्हें दो श्रेणियों में बांटा गया है–

(1) **बाह्य परजीवी–** जुऐं, चिचड़ी, माइट्स् एवं पिस्सू।

(2) **आंतरिक परजीवी–** प्रोटोजोआ, कृमि (हेलमिन्थ)।

(i) **जुऐं (लाइस)–** ये प्रायः सभी स्थानों पर मुर्गियों में अधिकतर पंखों के नीचे रहती है। मनुष्यों के जूं से मिलती–जुलती है।

लक्षण

- पक्षी सो नहीं पाते हैं।
- व्याकुलता के कारण पंखों को झुकाए रहते हैं।
- अण्डा उत्पादन घट जाता है।
- मुर्गियों के वजन में कमी हो जाती है तथा पक्षी दुर्बल हो जाते हैं।

(ii) **चीचड़ (टिक्स)–** मुर्गियों को प्रभावित करने वाली किलनी को सोफ्ट टिक या अरगस परसिकस टिक कहते हैं। ये मुर्गियों में चीचड़ी बुखार या स्पाइरोकीटोसिस फैलाते हैं। इस ज्वर के निम्न लक्षण हैंः–

- पक्षी के शरीर का तापक्रम बढ़ जाता है।
- पक्षियों में खुजली एवं बैचेनी हो जाती है।
- कलंगी व गलकम्बल पीले पड़ जाते हैं।
- वृद्धि रुक जाती है।
- अण्डा उत्पादन में कमी हो जाती है।

(iii) **माइट्स** : इन्हें स्केली लेग माइट्स भी कहते हैं, जो कि पैरों के स्केल्स में घुसकर रक्त चूसती है।

लक्षण
- प्रभावित पक्षियों का तापक्रम अधिक हो जाता है।
- माइट्स के पैरों में काटने से जलन व व्याकुलता होती है।
- पैरों में विरूपता आ जाती है।
- पक्षी लंगड़ा कर चलते हैं।
- इसे शल्क रोग या स्केलीलेग डीजीज भी कहते हैं।

खटमल (बग्स या पिस्सू) : ये गहरे खाकी या काले रंग के होते हैं। ये पक्षियों के शरीर से रक्त चूसते हैं तथा ठण्डे मौसम में अधिक विकसित होते हैं।

लक्षण
- खुजली होती है तथा बैचेनी रहती है।
- खून की कमी हो जाती है तथा उनकी वृद्धि कम हो जाती है।
- अण्डा उत्पादन में कमी हो जाती है।
- इनकी संख्या अधिक होने पर, कम आयु के चूजे मर सकते हैं।

रोकथाम
- गैमेक्सीन 5 प्रतिशत अथवा डी.डी.टी. 1 भाग में 5 भाग राख मिलाकर छिड़काव करें। डी.टी.टी. 1 भाग में 20 भाग राख मिलाकर मुर्गियों के शरीर पर मले।
- मुर्गियों को टिक्स से वंचित करने के लिये उन्हें 0.1 प्रतिशत मैलाथियॉन और 0.025 प्रतिशत डाइजिनॉन या 0.55 प्रतिशत बी.एच.सी के एक्वस सोलूशन में डूबोना चाहिये।
- कुक्कुटशाला के चारों ओर एक पतली नाली में मिट्टी का तेल व पानी के घोल को भरकर रखें ताकि खटमल व किलनियां आदि न आ सकें।
- दीवारों में दरार या छेद न रहने दें।

कोक्सीडियोसिस

यह प्रोटोजोआ जनित रोग है, जिसके कारण चूजों में अधिक मृत्यु दर तथा पठोरों में देरी से अण्डा देने की अवस्था तथा व्यस्क मुर्गियों में अण्डा देने की क्षमता में कमी आती है।

यह नौ प्रकार की होती है, जिनमें से निम्न दो प्रकार ज्यादा हानिकारक होता है:–

(1) **सीकल कोक्सीडियोसिस** : यह रोग 2–4 सप्ताह की उम्र के चूजों को अधिक होता है।

कारण – इसका कारण आइमेरिया टेनेला नाम प्रोटोजोआ है।

लक्षण – भूख लगना।

– प्यास की अधिकता।

– ऊंघना।

– खूनी दस्त तथा सीकम खून से भरा होता है।

– मृत्यु दर ज्यादा होती है।

(2) **आंतों की कॉक्सीडियोसिस** : यह रोग 4 से 10 सप्ताह वाले चूजों को होता है, परन्तु सभी उम्र की मुर्गियों में यह हो सकता है।

कारण – इस रोग का कारण आइमेरिया नेकट्रक्स प्रोटोजोआ है।

लक्षण – प्रभावित बच्चों को अधिक प्यास लगती है।

– भूख में कमी।

– आँखें बंद तथा ऊंघना।

– पीला या खूनी दस्त होना।

- बींट करने में कष्ट होना।
- चूजे कमजोर हो जाते हैं।
- मृतक पक्षी की आँत में खूनी धब्बे पाये जाते हैं।
- कमजोरी तथा पैर अयोग्य हो जाते हैं।

रोकथाम

- डीप लीटर पद्धति से बिछावन को सदैव सूखा रखें। यदि बिछावन गीला हो जाये तो उसे तुरन्त हटा देवें।
- बिछावन को सप्ताह में दो बार अवश्य पलटी देवें। बाह्य परजीवियों को नियंत्रित रखें।
- कॉक्सीडिओसिस रोग की जानकारी मिलने पर तुरन्त पशु चिकित्सक की सलाह से उपचार करें।

एस्परजिलोसिस

यह रोग मुर्गियों व टर्की दोनों में होता है। चूजे पैदा होते ही या हैविंग के समय इस रोग से ग्रसित हो जाते हैं। यह मुख्यतया श्वसन तंत्र से संबंधित होता है, परन्तु रक्त द्वारा अन्य अंगों को भी प्रभावित करता है।

यह नौ प्रकार की होती है, जिनमें से निम्न दो प्रकार ज्यादा हानिकारक होता है :–

कारण – यह रोग एस्परजिलोसिस फ्यूमिगेट्स नामक फंगस से होता है।

लक्षण – इस रोग में सभी अंग प्रभावित होते हैं, इसलिये लक्षण प्रभावित अंग पर निर्भर होते हैं।

– नवजात चूजों में यह रोग तीव्र रूप में होता है, जिससे मृत्यु दर अधिक होती है।

– तीव्र रूप को ब्रूडर न्यूमोनिया भी कहते हैं, जो कि 1–14 दिन की उम्र के चूजों में ज्यादा देखा गया है।

– तीव्र रूप में चूजों में भूख बन्द होना, श्वसन गति बढ़ना, शरीर का तापक्रम बढ़ना, बैचेनी, दस्त इत्यादि लक्षण प्रमुख है।

– पक्षियों के आंखों में भी असर होता है, आंखें सूज जाती है तथा पीला सा पानी एकत्रित हो जाता है।

– दीर्घकालीन अवस्था में, तीव्र रूप वाले ही कम असरदार लक्षण होते हैं।

रोकथाम – यह रोग फंगस के नमीयुक्त स्थानों/कूलर/बुरादे (लीटर) आदि में हो जाने से अण्डों/चूजों को संक्रमित होते हैं।

– बिछावन को गीला न होने दें व बुरादे में 1000 वर्ग फीट एरिया में 5 किलो चूना व 1 किलो बारीक पिसा हुआ नीला थोथा मिला देना चाहिए।

क्रानिक रेस्पाइरेट्री डिजीज
(सी.आर.डी.)

यह छूतदार श्वास से सम्बन्धित मुर्गियों की बीमारी है। यह रोग सभी आयु वाले पक्षियों में होता है परन्तु 4 से 8 सप्ताह की आयु के चूजों में ज्यादा होता है। इसमें पक्षियों के भार में कमी, अण्डा देने की क्षमता में 30% की कमी तथा धीरे–धीरे मृत्यु हो जाती है।

कारण – यह रोग माइकोप्लाज्मा गैलीसैप्टीकम द्वारा फैलता है। ई–कोलाई जीवाणु के संक्रमण पर यह रोग अधिक फैलता है।

प्रसार – शीत ऋतु में रोगी पक्षियों की दूषित वायु को साँस द्वारा ग्रहण करने पर फैलता है।

– रोग से ठीक हुई मुर्गियों के साथ स्वस्थ मुर्गियों को रखने पर भी यह रोग फैलता है।

– रोग ग्रसित मुर्गियों के अण्डों से भी नवजात चूजों में यह रोग फैलता है।

– पेट में कीड़े, स्थान परिवर्तन, विटामिन ए की कमी, असंतुलित आहार, नमी, ऋतु परिवर्तन, टीकाकरण आदि।

लक्षण – प्रारम्भिक लक्षण रानीखेत व आई.बी. से मिलते हैं।

– इस रोग में श्वास में कठिनाई, नाक से स्राव तथा श्वास नली में रेटलिंग की आवाज आती है।

– आहार उपयोग में कमी।

– मुर्गी कमजोर व सूख जाती है।

– अण्डा उत्पादन में कमी हो जाती है।

– बींट पतली हो जाती है।

उपचार – रोग के निदान एवं उपचार हेतु पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर रोग का नियंत्रित करें। रोकथाम के लिये मुर्गी फार्म की सामान्य प्रबन्धन व्यवस्थायें जैसे भीड़, अमोनिया, धुंआ, धूल, नमी आदि का ध्यान रखते हुए उचित कीटाणुनाशक प्रक्रिया अपनाई जानी चाहिये।